Reg No. MPHIN29537/12/1/2013-TC

मासिक पत्रिका

दानापानी

जैविक खेती ● कुटीर उद्योग ● पर्यावरण

» वर्ष : 1 » अंक : 2 » अप्रैल 2014

विश्वं पुष्टं ग्रामे आस्मिन अनातुरम मेरे गाँव में ही विश्व की पुष्टि का मुझे दर्शन हो।

दानापानी

(मासिक पत्रिका)

Reg No. MPHIN29537/12/1/2013-TC

वर्ष : 1 • अंक : 2

अप्रैल 2014

वार्षिक सदस्यता शुल्क : **250 रुपए**

सूचना

1. दाना-पानी मासिक पत्रिका हर माह की 10 तारीख को प्रकाशित होकर भेजी जाएगी। यदि 20 तारीख तक आपको यह पत्रिका प्राप्त न हो तो कृपया सूचित करें।
2. दाना-पानी मासिक पत्रिका में न्यूनतम विज्ञापन (और वह भी केवल जैविक खेती तथा जैविक खाद्यान्न से जुड़े) प्रकाशित किए जाएँगे। विज्ञापन की दरें इस प्रकार रहेंगी :-

- **पूरा पृष्ठ (रंगीन) : 5000 रु.**
- **आधा पृष्ठ (रंगीन) : 3000 रु.**

अनुक्रम

रविपुरा, आणंद (गुजरात) के प्रगतिशील किसान सर्वदमन पटेल की जैविक खेती की खुशबू तो उनके खेत में घुसते ही आ जाती है।

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक अरुण डिके द्वारा साधना प्रिंटिंग प्रेस, जी-3, चैतन्य कॉम्प्लेक्स, 8/1, काछी मोहल्ला, इंदौर से मुद्रित एवं 53-बी, प्रेम नगर, माणिक-बाग रोड, इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित।

संपादक : अरुण डिके (फोन : 0731-2471588)

संपादकीय

जैविक खेती के बढ़ते चरण

हमारी पारंपरिक खेती पूर्णतः जैविक होने के बावजूद भी आज असमंजस में है। इसका एक प्रमुख कारण तो यह है कि जितनी तेजी से जैविक खाद्यान्नों की जानकारी लोगों तक पहुँची है, उतनी तेजी से उसकी पूर्ति नहीं हो पा रही है। 100 साल पहले सब जैविक ही था तो किसी को चिंता नहीं थी। दूसरे महायुद्ध के बाद बचा हुआ गोला-बारूद और डीडीटी को समाप्त करने के लिए खेती में जब रसायनों का उपयोग प्रारंभ हुआ तब से खाद्यान्नों में प्रदूषण प्रारंभ हुआ। बढ़ते औद्योगिकीकरण के कारण प्रकृति की लूट-खसोट प्रारंभ हुई। जंगल तेजी से कटे, उर्वरा मिट्टी धूल में परिवर्तित हुई, पर्यावरण पर उल्टा असर पड़ा, खेत जहरीले होते गए। अब पता लगाना पड़ता है कि हम जो खा रहे हैं वह वास्तव में विषमुक्त है या नहीं। इसके बावजूद जैविक खेती बढ़ रही है। कारण एक तो रासायनिक खेती महँगी होती जा रही है जबकि जैविक खेती में सिवाय श्रम के कुछ आदान खरीदना ही नहीं पड़ता है। दूसरा, जो शुद्ध और स्वादिष्ट अन्न को प्राथमिकता देते हैं वे खुद-ब-खुद जैविक खाद्यान्न खोज ही लेते हैं। जैविक खेती बढ़ने का एक कारण यह भी है कि बड़ी मात्रा में जैविक खाद्यान्न देश के बाहर जा रहे हैं। एक तरफ किसानों को उनके द्वारा उत्पादित जैविक खाद्यान्नों के उचित दाम मिले और ग्राहक मिले, इसके लिए शहरी उपभोक्ता और सेवाभावी संस्थाओं को ग्राहक मंच बनाने की आवश्यकता है जो जैविक खेती की असमंजसता दूर कर सके।

● अरुण डिके

पाठकों के विचार

- दाना-पानी प्रवेशांक मिला। अच्छा लगा। **-आर.एन. बेरवा, पूर्व अतिरिक्त मुख्य सचिव, म.प्र.**
- अंक मिला। इस प्रकार के कृषि साहित्य की जरूरत थी। **-डॉ. वी.के. सारस्वत, पूर्व अपर संचालक (कृषि), म.प्र.**
- प्रयास अच्छा है। इसमें थोड़ा सुधार आवश्यक है। **-डॉ.जी.एस. कौशल,पूर्व संचालक (कृषि), म.प्र.**
- बधाई! बिल्कुल नई जानकारी खेती के बारे में पढ़ने को मिली। **-आर.डी. खरे, पूर्व अपर संचालक (कृषि), म.प्र.**
- पहली बार जैविक खेती पर विस्तार से पढ़ने को मिला। मैं कॉलेज में मँगाऊँगा। **-प्रो. डॉ. भोलेश्वर दुबे, स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर**

जैविक पदार्थों के उपयोग से मृदा में जल संवर्धन तथा मृदा के स्वास्थ्य में सुधार

● अनंत ओझा

जैविक पदार्थों में पौधों की जड़ें, पौधों व पशुओं के अवशेष, ह्यूमस, जीवाणु तथा विभिन्न प्रकार के जैविक पदार्थ भी इसमें आते हैं। किंतु यह उचित होगा कि इस श्रेणी में जीवित जैविक पदार्थों को सम्मिलित नहीं किया जाए। इसका सही तरह से आकलन करने के लिए रासायनिक प्रक्रिया द्वारा ऑर्गेनिक कार्बन का विश्लेषण करना चाहिए।

मृदा में पाए जाने वाले सभी प्रकार के जैविक अवशेष जैसे जीवित या मृत, ताजे या सड़े हुए, साधारण या जटिल सभी सम्मिलित हैं, जैविक पदार्थ कहलाते हैं। इसमें पौधों की जड़ें, पौधों व पशुओं के अवशेष, ह्यूमस, जीवाणु तथा विभिन्न प्रकार के जैविक पदार्थ भी इसमें आते हैं। किंतु यह उचित होगा कि इस श्रेणी में जीवित जैविक पदार्थों को सम्मिलित नहीं किया जाए। इसका सही तरह से आकलन करने के लिए रासायनिक प्रक्रिया द्वारा ऑर्गेनिक कार्बन का विश्लेषण करना चाहिए। ऐसा माना जाता है कि जैविक पदार्थ ऑर्गेनिक कार्बन के 1.724 प्रतिशत है। ह्यूमस गहरे काले रंग का पदार्थ है जिसके भौतिक और रासायनिक गुण निश्चित हैं।

ह्यूमस की बनावट : लिगनीन 45 प्र.श., अमिना एसिड 35 प्र.श., कार्बन 52-60 प्र.श., ऑक्सीजन 32-38 प्र.श., हाइड्रोजन 3-4 प्र.श., नत्रजन 4-5 प्र.श., स्फूर 0.4-0.6 प्र.श. व गंधक 0.4-0.6 प्र.श.।

जैविक पदार्थ का मृदा में योगदान

मृदा में जैविक पदार्थ महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कम मात्रा होने पर भी यह मृदा की भौतिक व रासायनिक प्रक्रियाओं पर धनात्मक प्रभाव डालते हैं। इसके प्रमुख लाभ निम्नानुसार हैं :-

1. **मृदा के रंग पर असर :** मृदा का रंग भूरे से काला हो जाता है।
2. **मृदा के भौतिक गुणों पर असर :-**

   ● मृदा दानेदार तथा आपस में जुड़ी रहती है। भुरभुरी बनी रहती है। मृदा की बनावट में सुधार आने के कारण वायु प्रवाह बना रहता है तथा जल

का प्रवाह भी बढ़ता है। भूमि का कटाव भी रुकता है।

- मृदा की चिकनाहट कम होती है।
- मृदा में लम्बे समय तक नमी बनी रहती है।
- ताजे जैविक पदार्थ केंचुए व दीमक के लिए उत्तम भोजन हैं जो मृदा की गुणवत्ता बनाए रखने में सहायक हैं।
- मृदा की स्थानीय जैविक पदार्थों से यदि मल्चिंग की जाए यानी मृदा को ढँका जाए तो गर्मी में मृदा का तापमान घटता है जबकि सर्दी में बढ़ता है।

मृदा के रासायनिक गुणों पर प्रभाव

मृदा पर जैविक पदार्थ का रासायनिक गुणों पर प्रभाव निम्नानुसार है :-

1. जैविक अवयव मृदा में रासायनिक तत्वों का भंडारण करते हैं जो फसलों के लिए आवश्यक है। यह जानना आवश्यक है कि मृदा में नत्रजन, स्फूर व गंधक की मात्रा जैविक रूप में विद्यमान रहती है। सड़ने के पश्चात यह आवश्यक तत्व धीरे-धीरे पौधों को उपलब्ध होते जाते हैं। इसके अलावा कई प्रकार के हार्मोन्स तथा एंटीबायोटिक भी प्राप्त होते हैं जिससे यह आवश्यक तत्व घुलनशील हो जाते हैं। इस हेतु रासायनिक प्रक्रिया महत्वपूर्ण है।
2. जैविक पदार्थों की केटायन एक्सचेंज केपेसिटी मृदा खनिज से 20-30 प्रतिशत अधिक होती है। जैविक रसायन कार्बन डाई ऑक्साइड, नाइट्रेट, सल्फेट तथा जैविक अम्ल निरंतर मिलते रहते हैं जिससे मृदा के खनिज घुलनशील हो जाते हैं और पौधों को आवश्यक तत्व धीरे-धीरे मिलते रहते हैं।
3. जैविक पदार्थ 30 से 90 प्र.श. तक खनिज मृदा में तत्वों को आत्मसात कर लेते हैं।
4. जैविक पदार्थ मृदा में उपस्थित केटायन को शीघ्र बदलने की क्षमता रखते हैं।
5. इसमें नत्रजन, स्फुर व गंधक जैविक पदार्थ में संग्रहीत रहता है।
6. ह्यूमस की अम्लता के कारण मृदा खनिज से तत्व शीघ्र घुलनशील हो जाते हैं।
7. जैविक पदार्थ मृदा में ऊर्जा का संचार करता है जिससे जीवाणुओं का विकास बढ़ता है।

मृदा के जैविक गुणों पर असर

जैविक अवयव ऊर्जा, कार्बन एवं जीवाणुओं के लिए उपयोगी है। इससे मृदा में जीवाणुओं की मात्रा में वृद्धि होती है जिससे मृदा की उर्वरकता बनी रहती है।

जैविक पदार्थ में स्थायी ऊर्जा

जैविक पदार्थ कई प्रकार की ऊर्जा का भंडारण करते हैं। यह ऊर्जा आवश्यकता होने पर अन्य हिस्सों में वितरित हो जाती है एवं तापमान के रूप में उपयोगी रहती है।

जल एवं मृदा संवर्धन

खेत में यदि जैविक पदार्थ पर्याप्त हों तो मृदा व जल का ह्रास रुकता है। वर्षा के वेग में कमी आती है तथा वर्षा की बूँदों से होने वाली हानि से बचा जा सकता है। जैविक अवशेष व ह्यूमस जल के प्रवाह को कम करते हैं तथा मृदा में केपिलरी प्रणाली को बढ़ावा देते हैं जिससे जल भूमि में निरंतर प्रवेश करता रहता है व नमी बनी रहती है। अतः यह वैज्ञानिक आधार पर सिद्ध हो चुका है कि जैविक पदार्थ जल संवर्धन की प्रक्रिया द्वारा मृदा को रोकता है। इस पूरी प्रक्रिया में विभिन्न प्रकार की वनस्पतियाँ मृदा को रोकती हैं।

जैविक पदार्थों का प्रबंधन

1. खेत के जैविक कचरे का उपयोग करना जिसमें डंठल, बिना बीज के खरपतवार, खेत में पाए जाने वाले जैविक पदार्थ काम में लिए जा सकते हैं। यह सतह पर आच्छादन का काम तो करेगा ही, साथ ही इसे खेत में जोता भी जा सकता है।
2. स्थान विशेष की वनस्पति के आधार पर फसल का चयन करना।

बड़ी मात्रा में जैविक खाद

इस प्रकार की खाद बायोगैस स्लरी से बनती है। इसमें पशुओं का गोबर व मूत्र के अलावा जैविक अवशेष भी विद्यमान रहते हैं। साहित्य में इस बारे में बहुत सी

जानकारियाँ उपलब्ध हैं। यह सभी जैविक पदार्थ मृदा में नमी बनाए रखने के अलावा उसके स्वास्थ्य के लिए भी उपयोगी है।

भूसे से मल्च

फसल अवशेष जैसे ज्वार का भूसा, मक्का के डंठल, सूरजमुखी का भूसा, सोयाबीन का भूसा और अन्य प्रकार का कोई भी भूसा जिसे पशु नहीं खा सकते, को मल्च के रूप में काम में लिया जा सकता है। साधारणतः इसकी 5-6 टन प्रति हैक्टेयर मात्रा काफी है। फसल के अंकुरण के बाद पंक्तियों के बीच यदि भूसे से मल्चिंग किया जाए तो इससे मृदा में नमी बनी रहती है व साथ ही खरपतवार की रोकथाम भी होती है। इस तरह के मल्च सूखे मौसम में अधिक उपयोगी हैं। यदि वर्षा में अंतराल आए तो भी यह लाभदायक है। फसल काटने के पश्चात यह उचित होगा कि इस मल्च को मृदा में जोत दिया जाए जिससे सड़ने के बाद वह खाद में परिवर्तित हो जाएगा तथा मृदा के भौतिक गुणों में सुधार लाकर उर्वरकता शक्ति में बढ़ोतरी करेगा।

उक्त तकनीकों का यदि सही परिप्रेक्ष्य में उपयोग किया जाए तो अवर्णित लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं। ■

आवरण-कथा

सर्वदमन पटेल की जैविक खेती

आणंद (गुजरात) के पास रविपुरा गाँव के सर्वदमन पटेल उन बिरले किसानों में से हैं जिन्होंने मात्र 15 साल में सफल किसानों की श्रेणी में अपना नाम दर्ज कराया है। कृषि स्नातक सर्वदमन ने स्नातकोत्तर पदवी के लिए अमेरिका का रास्ता पकड़ा और मेडिसान के विसकॉनसिन विश्वविद्यालय से डिग्री हासिल की। वहाँ डेढ़ साल तक वे अलग-अलग दुग्धालय में नौकरी करते रहे। उन्हें अमेरिका का ग्रीन कार्ड मिल रहा था लेकिन उनका मन तो अपने गाँव में ही रमा हुआ था। अतः 1975 में वे वापस रविपुरा आ गए और उन्होंने जोर-शोर से

रासायनिक खेती शुरू की। लेकिन उनके खेत पर हुई तीन दुर्घटनाओं ने उन्हें झकझोर दिया और उन्होंने रसायनों को रामराम किया। एक- ज्यादा से ज्यादा रसायन डालने के बावजूद उपज बढ़ नहीं रही थी और मिट्टी तथा पशुओं का स्वास्थ्य गिर रहा था। दूसरा- उनके खेत का मजदूर दवा छिड़कते हुए जहर से बेहोश हो गया। तीसरा- जहरीले चारे से पशु बीमार पड़ने लगे। इसके बाद तो सर्वदमन ने जैविक खेती पर लिखी जो किताब हाथ आई वह पढ़ डाली और 1995 में जैविक खेती प्रारंभ की और वर्ष 2000 में उन्हें जैविक खेती में पूरी सफलता मिली।

जैविक खेती प्रारंभ करते ही खेतों में बढ़ते केंचुए, मिट्टी और पशुओं के स्वास्थ्य में वृद्धि और उनकी जैविक खेती देखने आने वाले किसानों की बढ़ती संख्या ने उन्हें प्रेरणा दी और देखते ही देखते सर्वदमन गुजरात के ही नहीं, भारत के सिंगखाद (बायोडायनामिक) खेती के सिरमौर बन गए। उनके पास 75 दूध देने वाली गायें भी हैं।

सर्वदमन के पास 40 एकड़ जमीन है। 6 एकड़ में वे सिंग खाद की मदद से सब्जियाँ उगाते हैं। साथ में केला, पपीता, अमरूद, आम, अनार, चीकू, आँवला, नींबू, मौसम्बी आदि फलों की खेती भी करते हैं। इसके अलावा सभी प्रकार का अनाज, दालें, तिल-तिलहन की फसलें भी लगाते हैं। रविपुरा में ही उनके पिताजी के नाम की भाईकाका कृषि केन्द्र दुकान है जहाँ से सब खाद्यान्न तथा डेयरी का दूध बिकता है। आणंद में अमूल डेयरी होते हुए भी सर्वदमन की डेयरी का दूध 2 रु. महँगा होने पर लोग खरीदते हैं। बचा हुआ माल वे बड़ौदा या अहमदाबाद भेज देते हैं।

सर्वदमन अच्छे वक्ता भी हैं। उनके यहाँ सतत जैविक खेती और बायो डायनामिक खेती के प्रशिक्षण वर्ग चलते रहते हैं। बायो डायनामिक खेती वे न्यूजीलैंड के पीटर प्रोक्टर से सीखे थे। (पीटर प्रोक्टर ने इंदौर में भी बायो डायनामिक की शुरुआत की थी।)

सर्वदमन ऑर्गेनिक फार्मिंग एसोसिएशन गोआ के अध्यक्ष हैं। खेत पर ही बने शानदार बंगले में उनका निवास है।

■

शहरी खेती

● **कमलाकर साधले,** गोआ

जिस घर का मालिक खुद बगीचे में काम करता है, सब्जी, फल, फूल उगाता है और रोज उसका घर में सेवन होता है। जिस घर के बच्चे अपने आँगन में ही खेलते हैं जो स्वयं आत्मनिर्भर विश्व निर्माण करता है, उस रसमय घर पर चलती यह कलम...
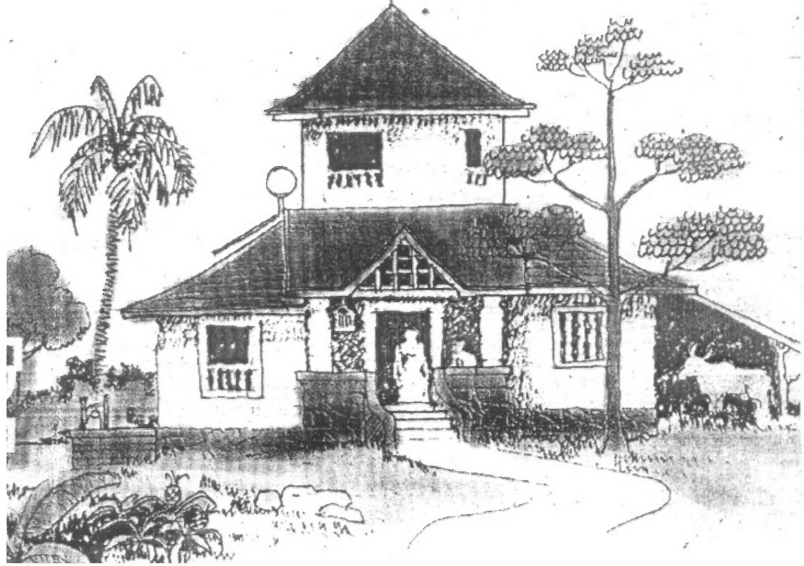
प्रकृति और मानव के संयोग से जैसा विश्व निर्माण हुआ, उसी संकल्पना ने हैबीटाट अर्थात् आवास को जन्म दिया। घर जैसा जन्म लेता है उसी तरह जैविक प्रक्रियाओं से उसका विस्तार भी होने लगता है। हमारे बचपन में घर की शुरुआत बीचोंबीच बने आँगन से होती थी। डेढ़ या दोगुना ऊँचाई का बना मकान, उसकी चार दीवारों, ऊपर छप्पर, उसी को चौक बोलते थे और फिर आवश्यकतानुसार चारों ओर कमरे बनाए जाते थे। बच्चे बढ़ रहे हैं, उनको पढ़ाई के लिए अलग से कमरा चाहिए, घर में ब्याह-शादी मांगलिक कार्य होता है। मेहमानों की रहने की जरूरत पड़ती है। घर के पीछे घर के लिए सब्जी, पूजा के लिए फूल, फिर टूट-फूट ये चलता ही रहता था।

लेकिन एक विशिष्ट साँचे में ढला मकान हमने कभी पसंद नहीं किया। कारण परंपराओं से गढ़ा हमारा मानव शास्त्र बदलते परिवेश में हमें भी बदलने को मजबूर कर देता है। आज का यह व्यापारी युग 'मास हासिंग' का शिकार हो चुका है और अपनी जड़ से उखड़े हम लोग विकल्प नहीं इसलिए फ्लैट संस्कृति को ही स्वीकार कर लेते हैं। धीरे-धीरे यह संस्कृति भी ढाँचे में ढल जाती है। इस कठोर मर्यादा के भीतर ही हम फिर फ्लैट के अंदर की रचनाओं में फेरबदल, रंग-रंगोटी कर अपने आपको पुचकार लेते हैं। मगर हमने घर नहीं बदला है। घर का स्वरूप बदल दिया है और यह बदले भी जैविक ही होता है। हमारा अपना घर कितना भी टूटा-फूटा रहा हो, सामने वाले के महलनुमा मकान में हमें वह सुख मिलता नहीं है। हमें वही गोबर-मिट्टी से लीपा-पोता घरौंदा ही दशकों तक याद रहता है।

घर यानी केवल लोहा, सीमेंट और ईंट से जुड़ी वस्तु नहीं है, उस वास्तु का उस जमीन से जुड़ा एक गहरा रिश्ता होता है। उसमें सुरक्षा, स्थिरता के साथ आसपास उपलब्ध संसाधनों से हमारा पोषण कैसे हो, यह भावना भी रहती है। अनादि काल से मानवी बसाहट जीवनावश्यक

वस्तुओं से जुड़ी थी यानी जहाँ जल और अन्न ये प्रमुख थे। आसपास अन्न हो या उन्हें पैदा करने वाले खेत हों और बारह महीने प्यास बुझाने वाली नदी। यहीं पर विश्व की नगरीय सभ्यता ने जन्म लिया है। इस व्यवस्था को हम जितना पक्के मन से आत्मसात करेंगे उतना ही हमारा घर सजीव हो उठेगा, पर्यावरण प्रिय होगा।

इन मकानों में रहने वालों ने यदि अपनी आसपास की भूमि को आत्मसात किया तो यह सह जीवन (सिंबायोटिक) के माध्यम से हम शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रहेंगे। जिस घर का मालिक अपने ही बगीचे में काम करता है, सब्जियाँ, फल, फूल उगाता है और रोज उसका घर में सेवन करता है। जिस घर के बच्चे अपने आँगन में ही खेलते हैं और जो स्वयं आत्मनिर्भर विश्व निर्माण करता है वही रसमय घर होता है। उस घर के बगीचे में फल रही तुलसी को भी घर का सुख-दुःख समझता है। जिस घर से नियमित पक्षी दाना-पानी लेने आते हैं वही घर और उसमें रहने वालों को ही मानवीय संवेदना का साक्षात्कार होता है।

■

जैविक खाद्यान्नों के भंडारण की जैविक विधि

1. रीठा, निम्बोली, बच (वेटवेड) और पुदीना को पीसकर उसका पावडर अनाज के कोठे में डालना चाहिए।
2. नीम के पत्तों को कोठी के बीचोंबीच में और फिर ऊपर डालकर अनाज भंडारण करना चाहिए। बीच-बीच में पत्ते बदल देना चाहिए।
3. कोदो कुटकी के दानों को 2 किलो प्रति क्विंटल अनाज की दर से मिलाकर डालना चाहिए। अनाज पिसाने भेजते समय उसे छानकर अलग कर लें।
4. अरंडी का तेल 150 ग्राम/50 किलो गेहूँ में मिलाकर फिर भंडारण करें।

(नोट : जैविक खाद्यान्नों में कीड़े जल्द लगते हैं क्योंकि उनकी शुद्धता कीड़ों को आकर्षित करती है।)

गाँधी विचार

- एक वकील के कार्य का वही मूल्य है जो नाई के कार्य का है। क्योंकि हरेक को उसके श्रम का मूल्य मिलना चाहिए।
- जमीन जोतने वाले का जीवन सच्चा जीवन है।
- एक व्यक्ति की अच्छाई में ही सबकी अच्छाई दिखती है।

सूचना

दाना-पानी का शुल्क अथवा विज्ञापन का शुल्क आप निम्न खाते में जमा करवा सकते हैं :-

'बाबा डिके जन शिक्षा समिति'

बैंक ऑफ इंडिया, शाखा : राऊ

- **बचत खाता नं. 88111011000115**
- **IFSC : BKID 008011**

फसल आधारित कुटीर उद्योग

सुगंधित तेल और इत्र

फसलों का अच्छा उत्पादन लेने के साथ-साथ किसान को वे फसलें भी लेनी चाहिए जिनसे गाँवों में ही कुटीर उद्योग चला सकें।

सुगंधित वनस्पतियाँ, फूल और उनसे निकाले गए तेल और इत्र भारत की शानदार परंपरा रही है। जहाँगीर की पत्नी नूरजहाँ इत्र भरे टब में नहाती थी। सन् 1612 में उसकी माँ ने गुलाब का इत्र बनाया था। उसे नाम दिया था इत्र-ए-जहाँगीर। इंग्लैंड की महारानी इत्र का उपयोग करती थी। 15वें लुईस की प्रेमिका हमारे इत्रों का उपयोग करती थी। उसका इत्र का सालाना खर्च उस समय 5 लाख रुपये होता था। हमारे इत्र ने इंग्लैंड में धूम मचा दी थी। हमारे इत्र के कारण वहाँ अनैतिकता फैली इस वजह से में राजा जॉर्ज द्वितीय ने हमारे इत्र पर पाबंदी लगा दी।

आज हम टीवी पर जो सुगंधित स्प्रे के विज्ञापन देखते हैं वे सुगंधी द्रव्य हमारे इत्रों के सामने कुछ भी नहीं हैं। किसानों को समूह बनाकर हमारे गुलाब, मोगरा, चमेली, चम्पा, जूही, मधु कामिनी जैसे फूलों से इत्र निकालने के बारे में सोचना चाहिए। यहाँ कुछ वानस्पतिक तेलों के बारे में जानकारी दी जा रही है :-

■ नींबू (लेमन) घास (ग्रास)

लेमन ग्रास की विदेशों में इतनी माँग है कि हमारे किसान उसका तेल निकालने का सोचते ही नहीं हैं। इसके तेल में 'अ' जीवनसत्व रहता है। लेमन ग्रास की एम-1 और पी-1 जातियाँ प्रचलित हैं। इन पौधों की ऊँचाई लगभग 124 सेमी होती है तथा उसमें 35 कल्ले (टिलर्स) निकलते हैं। एक पौधे से 180 ग्राम हरा चारा और 12 मिली लीटर तेल निकलता है। पौधे में 67 प्रतिशत तेल होता है। इसे भाप देकर निकाला जाता है।

■ पामरोझा (तिरवाड़ा)

प्रचलित जातियाँ : आईडब्ल्यू 4475, आईएन 4504 पामारोज की ऊँचाई 182 सेमी होती है। इसके चारे में तेल का अंश 0.766 प्रतिशत होता है। पामारोज की बोवनी जून-जुलाई में होती है। आईसी-31245 जाति के पामारोज से प्रतिवर्ष प्रति हैक्टेयर 246 क्विंटल हरे पत्ते मिलते हैं और करीब 931 लीटर तेल मिलता है। इस तेल से जिरानिऑल तत्व मिलता है।

■ खस (वेटीवरा)

खस की जड़ों से सुगंधित तेल निकलता है। एनएसए-66403, 66404 और 66416 खस की सुगठित जातियाँ हैं। एक हैक्टेयर खस से 11-12 क्विंटल जड़ें निकलती हैं।

■ पुदीना (मेथो)

ये वनस्पति मूलतः जापान से आई है। पुदीना में 1.3 प्रतिशत तेल मिलता है। प्रति हैक्टेयर 24 क्विंटल उपज मिलती है।
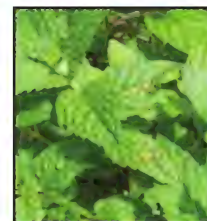
■ जिरेनियम

मूलतः दक्षिण अफ्रीका से आया यह पौधा गमले में भी लगाया जा सकता है। इसकी ऊँचाई लगभग 7 मीटर होती है। फूल गुलाबी रंग के ऊपर के दो पत्तों पर जामुनिया रंग की रेखाएँ होती हैं। ■

जिम्मी मॅकगिलिगन

एक अद्‌भुत रसायन...!

21 अप्रैल को जिम्मी की तीसरी पुण्यतिथि है। उन्हें हार्दिक श्रद्धांजलि।

कृषि वैज्ञानिक सर अल्बर्ट हॉवर्ड (1872-1940), वास्तुविद लैरी बेकर (1917-2007) और जेम्स (जिम्मी) रेनॉल्ड मॅकगिलिगन (1943-2011) ये वे बिरले अंग्रेज थे जो भारत की मिट्टी को अपनी मिट्टी मानकर किसानों और गाँव वालों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करते रहे। जिम्मी और लैरी तो इसी मिट्टी में समा गए। हॉवर्ड ने 1934 में भारत छोड़ा और 1940 में उनकी लंदन में मृत्यु हो गई।

जिम्मी मॅकगिलिगन

सन् 1943 में उत्तरी आयरलैंड में जन्मे श्री जिम्मी मॅकगिलिगन विश्व बहाई केन्द्र के सामाजिक व आर्थिक विकास विभाग के आह्वान पर वर्ष 1986 में म.प्र. के ग्वालियर जिले के रब्बानी विद्यालय के 76 एकड़ भूमि के संरक्षण व विकास करने के लिए भारत आए थे। वे अपना प्रोजेक्ट पूरा करके वापस जाने ही वाले थे कि योग-संयोग से उनकी मुलाकात बरली ग्रामीण महिला विकास संस्थान, इंदौर की निदेशिका जनक पलटा से हुई और 27 नवंबर 1988 में वे उनसे विवाह बंधन में बँध गए। उन्हें संस्थान का प्रबंधक नियुक्त किया गया। तभी से वे अपनी पत्नी के साथ ग्रामीण एवं आदिवासी समुदायों की सेवा में लग गए। उन्होंने मध्यप्रदेश को अपनी कर्मभूमि बना लिया था।

उस समय एक बंजर सी जमीन और सुनसान जगह पर चलने वाले इस संस्थान के बारे में कोई नहीं सोच सकता था कि आने वाले समय में इस संस्थान को सामाजिक एवं आर्थिक विकास का उदाहरण माना जाएगा। यहाँ पर सामाजिक और आर्थिक रूप से उपेक्षित आदिवासी व ग्रामीण महिलाओं को व्यावसायिक कौशल,

अपनी पत्नी जनक पलटा के साथ जिम्मी।

ग्राम सनावदिया स्थित जिम्मी सेंटर

स्वास्थ्य, साक्षरता, व्यक्तित्व और पर्यावरण विकास का प्रशिक्षण दिया जाता है। संस्थान में प्रवेश लेते समय जिन महिलाओं को ठीक से हिन्दी बोलना तक नहीं आती, छह महीनों के प्रशिक्षण के बाद वे छात्राएँ ओपन स्कूल परीक्षा को उत्तीर्ण कर लेती हैं। संस्थान परिसर में खेत, बगीचे, सुविधायुक्त भवन, कम्प्यूटर लैब और क्लास रूम हैं। यह संस्थान ही जिम्मी की दुनिया का केन्द्र था। उनके जीवन का उद्देश्य था। उनका कर्म, धर्म, उनका घर था और उनका जुनून था। उन्होंने जीवन भर कर्म को ही पूजा माना। वे बोलने में कम और काम में अधिक विश्वास रखते थे।

सौर ऊर्जा के लिए समर्पित था उनका जीवन

म.प्र. का पहला सामुदायिक सोलर किचन : सन् 1998 में उन्होंने बरली ग्रामीण महिला विकास संस्थान में मध्यप्रदेश का पहला सामुदायिक सोलर किचन 10-10 मीटर की 3 पैराबोलिक सोलर शैफलर डिशें लगाकर बनाया था। पिछले 13 वर्षों से अब तक हर साल लगभग 300 दिन इस किचन में हर रोज 120 लोगों का नाश्ता, चाय व दोपहर तथा रात का भोजन बनाया जा रहा है व प्रतिदिन 1 गैस सिलैंडर और प्रति माह लगभग 900 किलो लकड़ी की बचत होती है।

विश्व का पहला व एकमात्र स्टोरेज कुकर भी उन्होंने सन् 1999 में संस्थान में लगाया था। यह कूकर दिन भर सौर ऊर्जा इकट्ठा कर लेता और रात को इस पर तकरीबन 10 से 12 किलो आटे की रोटियाँ बनाई जाती हैं। संस्थान में विगत कई वर्षों से सोलर चूल्हे पर खाना बनाने वाली सागरी और डांगरी इस पर रोटी सेंकने, दाल-सब्जी बनाने, गेहूँ, ज्वार, बाजरे का दलिया, खिचड़ी बनाने के अनुभव पर बहुत गर्व से बताती हैं कि जब चाहे जलाओ, खाना बनाओ और बुझा दो। इस चूल्हे पर बरसात को छोड़कर हर मौसम में खाना बनाया जा सकता है। इससे धुआँ नहीं निकलता। लकड़ी, कंडे, गैस व घासलेट की भी बचत होती है। खाना पौष्टिक रहता है। विटामिन नष्ट नहीं होते तथा समय की भी बचत होती है। सिर्फ आवश्यकता होती है संकल्प लेने की कि सोलर कूकर पर ही काम करेंगे।

दूसरा सामुदायिक सोलर किचन : जिम्मी ने अपने प्रशिक्षित किए हुए आदिवासी सोलर इंजीनियर श्री

सखाराम डावर और श्री राजेन्द्रसिंह चौहान के साथ मिलकर झाबुआ जिले के गड़वाड़ा गाँव के चेतना हाईस्कूल के छात्रावास में पाँच सोलर डिश बनाकर 900 बच्चों का खाना बनाने की क्षमता का मध्यप्रदेश का सबसे बड़ा सामुदायिक सोलर किचन बनाया।

तीसरा सामुदायिक सोलर किचन धार जिले के दत्तीगाँव के स्कूल में छात्रावास में बनाकर दिया जिसमें 450 बच्चों का खाना बनाया जाता है।

चौथा सामुदायिक सोलर किचन उन्होंने धार जिले के धानी गाँव के कन्या छात्रावास में बनाकर दिया जहाँ पर 250 लोगों का खाना बनाया जाता है।

पाँचवाँ सामुदायिक सोलर किचन इंदौर के कोठारी मार्केट में श्रद्धानंद आश्रम में भी करीब 60 अनाथ बच्चों के लिए बनाकर दिया।

हवा और सौर ऊर्जा से संचालित पॉवर स्टेशन सनावदिया गाँव में बनाया : इंदौर से 18 कि.मी. दूर सनावदिया गाँव में बसी भूमिहीन 32 गरीब परिवारों की बस्ती के लिए उन्होंने सौर ऊर्जा व पवन चक्की से 2 किलोवाट का हायब्रिड पावर स्टेशन बनाया। यह डेली कॉलेज इंदौर के माध्यम से राउंड स्क्वेयर के ऑस्ट्रेलिया, साउथ अफ्रीका, ओमान, मस्कट, केनेडा, इंग्लैंड और स्कॉटलैंड से आए 22 छात्राओं ने यहाँ रहकर श्री जिम्मी मगिलिगन के मार्गदर्शन में बनाया और सड़कों को सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा से दस दिनों में रोशन किया।

सोलर डिश बनाने का प्रशिक्षण : जर्मनी की हाइके होउट के मार्गदर्शन में प्रबंधक श्री जिम्मी मगिलिगन ने सन् 2003 में झाबुआ, आलीराजपुर, मेघनगर, धार तथा ग्वालियर जिले के गाँवों में कई लोहारों और सुतारों को 10 मीटर के शैफलर डिश बनाना सिखाया और बिगड़ने पर सुधारने का प्रशिक्षण भी दिया। उल्लेखनीय है कि लोहारों व सुतारों को यह प्रशिक्षण देने का मुख्य उद्देश्य यह था कि गाँव के लोग सोलर कुकर बनाएँगे तो कुकर की कीमत कम होगी और लोग अधिक से अधिक कुकर खरीदने में अपनी रुचि दिखाएँगे। साथ ही यदि कुकर बिगड़ भी जाए तो उसे आसानी से सुधार सकेंगे। इसकी विशेषता यह है कि इन कुकरों में विदेशी सामान की कोई

श्री जिम्मी मगिलिगन को प्राप्त सम्मान एवं पुरस्कार

सद्भावना एवं विकास केन्द्र, भोपाल ने श्री जिम्मी मगिलिगन को सन् 2010-11 के प्रमुख सामाजिक कार्यकर्ता का इनोवेटिव सोशल एजुकेटर्स एलेक्स मेमोरियल पुरस्कार दिया। यह पुरस्कार उन्हें समाज के पिछड़े वर्ग की ग्रामीण एवं आदिवासी महिलाओं के विकास और सशक्तीकरण में योगदान देने के लिए दिया गया। यह पुरस्कार मुख्य अतिथि डॉ. (श्रीमती) निशा दुबे कुलपति, बरकतउल्लाह विश्वविद्यालय भोपाल द्वारा एक विशेष समारोह में 8 अगस्त को दिया गया था। डॉ. दुबे ने कहा- ''मैं इस दम्पति को 25 सालों से जानती हूँ और व्यक्तिगत रूप से इनका समर्पण देखा है। इस दम्पति को यह पुरस्कार देना मेरे लिए गौरव की बात है जिन्होंने अपना पूरा जीवन गरीब युवा ग्रामीण और आदिवासी महिलाओं के सशक्तीकरण में लगा दिया है।'' यह पहला पुरस्कार है जो इस दम्पति को एकसाथ दिया गया है।

ऑर्डर ऑफ ब्रिटिश एम्पायर सम्मान

सन् 2008 में संस्थान के प्रबंधक श्री जिम्मी मगिलिगन को ब्रिटेन की महारानी एलिजाबेथ द्वितीय ने एक सम्मान समारोह में लंदन के विंडसर केसल में ऑर्डर ऑफ ब्रिटिश एम्पायर से सम्मानित किया। यह सम्मान उन्हें समाजसेवा व भारत के ग्रामीण समुदायों में वैकल्पिक ऊर्जा को बढ़ावा देने हेतु दिया गया था।

जरूरत नहीं है। सोलर कुकर के साथ जिम्मी ने सोलर वाटर हीटर, सोलर ड्रायर, सोलर बेकरी, सोलर वाटर डिस्टीलर और मोबाइल चार्जर भी बनाए।

भारत के ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में 400 से ज्यादा पेराबोलिक सोलर कुकर लगाकर दिए जो कि सफलतापूर्वक उपयोग किए जा रहे हैं।

धार जिले के ग्राम सेमलीपुरा में मध्यप्रदेश आजीविका परियोजना के सहयोग से दो सोलर टी स्टाल खोले गए हैं। श्रीमती कोमल डावर ने एक चर्चा में बताया कि हर रोज 70-80 रुपए कमा लेती हूँ। लेकिन हाट बाजार के दिन 1000 रुपए कमा लेते हैं। इसी तरह अन्य कई महिलाएँ समूह अपने-अपने गाँवों में सोलर कुकर से कमा रही हैं।

राष्ट्रीय महिला कोष का राष्ट्रीय प्रशिक्षण केन्द्र घोषित

श्री जिम्मी मॅकगिलिगन के नेतृत्व में वर्ष 2009 में इंदौर में बरली संस्थान सौर ऊर्जा के क्षेत्र में राष्ट्रीय प्रशिक्षण केन्द्र घोषित किया गया। प्रथम अंतरराष्ट्रीय सोलर फूड प्रोसेसिंग (सौर ऊर्जा खाद्य प्रसंस्करण) सम्मेलन संस्थान में 14 से 16 जनवरी 2009 में आयोजित किया गया। यह अंतरराष्ट्रीय सौर ऊर्जा समुदाय विजन्स जर्मनी, नवीन एवं नवीनीकरण ऊर्जा मंत्रालय भारत सरकार तथा ऊर्जा एवं पर्यावरण अध्ययनशाला देवी अहिल्या वि.वि. के सहयोग से आयोजित की गई थी। सम्मेलन में विश्व के 16 देशों के करीब 200 प्रतिनिधि सम्मिलित हुए। सम्मेलन में विश्वविख्यात पर्यावरणविद श्रीमती वंदना शिवा ने कहा- संस्थान सोलर एनर्जी पर काम कर रहा है और जैविक खेती पर भी। अगर दोनों संस्थान मिलकर राष्ट्रीय स्तर पर आंदोलन चलाए तो एक नया परिदृश्य देखने को मिलेगा। किसानों को आत्महत्या नहीं करनी पड़ेगी। ग्रामीण उद्योगों को विकसित होने के अवसर मिलेंगे। पर्यावरण सुधरेगा और पृथ्वी का तापमान कम होगा।

संस्थान के जल संरक्षण और प्रबंधन

जिम्मी ने रेन वाटर हार्वेस्टिंग (बारिश के पानी का पुनः उपयोग), जैविक खेती, वर्मी कम्पोस्ट (केंचुओं से खाद बनाना), व्यर्थ चीजों का बेहतर उपयोग तथा पर्यावरण शिक्षा में अपना बहुमूल्य योगदान दिया। वे प्रशिक्षणार्थियों को एक-एक बूँद पानी बचाने और उसका पुनः उपयोग करने का महत्व बताते थे। इसी का परिणाम है कि बरली संस्थान में रसोईघर, शौचालय, बर्तन साफ करने और भोजन बनाने के बाद पानी को यूँही व्यर्थ बहने नहीं दिया जाता है। इस पानी का भी सदुपयोग किया जाता है और उसे टंकी में जमा किया जाता है। फिर पाइपों, फव्वारों से खेतों और बगीचों में इस पानी का उपयोग किया जाता है। इस तरह पानी को दोबारा उपयोग किया जाता है। बरसात के पानी को भी व्यर्थ बहने नहीं दिया जाता है। इस पानी को कुएँ के पास गड्ढा करके उसमें रेत, गिट्टी, पत्थर भरकर पानी को इकट्ठा किया जाता है फिर साफ करके कुएँ में वापस डाला जाता है जिससे पानी का स्तर भी बढ़ जाता है। बाद में पानी को जरूरत के अनुसार खेतों में डाला जाता है।

कचरे का सही उपयोग

जिम्मी पर्यावरण को साफ-सुथरा और शुद्ध तथा सुंदर बनाए रखने पर खास ध्यान देते थे। पर्यावरण के बचाव के लिए यह कोशिश करते थे कि कोई भी चीज बर्बाद न हो। संस्थान में किसी भी चीज को कचरा या बेकार समझकर फेंका नहीं जाता। छोटी-छोटी चीज से लेकर बड़े से बड़े कचरा कहे जाने वाली चीजों का उपयोग इस तरह से करते हैं कि वह कचरा न रहकर उपयोग की वस्तु बन जाती है। जिम्मी ने रद्दी पेपर व सूखे पत्ते से कंडे बनाने की मशीन बनाई जिसमें रद्दी पेपर और खेत का बारीक कचरा इकट्ठा कर पानी में गलाया जाता है और उससे कंडे बनाए जाते हैं। बरसात में जब धूप नहीं होती, तब इन कंडों का चूल्हा जलाकर खाना बनाया जाता है। इन कंडों से धुआँ नहीं के बराबर होता है। इससे पर्यावरण को नुकसान नहीं होता है।

संस्थान के लहलहाते खेतों पर उनकी छाप

श्री जिम्मी मगिलिगन ने संस्थान में कई नए-नए प्रयोग किए। संस्थान के चारों तरफ झाड़ियाँ ऊबड़-खाबड़ जमीन और सुनसान रास्ते थे। यहाँ कोई चहल-पहल नहीं थी। रात को सांय-सांय की आवाजें गूँजती थी। यहाँ की छह एकड़ जमीन में जिम्मी ने बागवानी, खेतीबाड़ी की शुरुआत की। उन्होंने यहाँ के प्रशिक्षणार्थियों और स्टाफ को खेती और बागवानी के नए-नए आसान तरीके सिखाए। चूँकि यहाँ आई हुई अधिकांश प्रशिक्षणार्थी खेती करने वाले परिवार से आती है जो यहाँ से जाने के बाद भी खेती का काम करते हैं इसलिए प्रशिक्षण में सीखी हुई बातें उन्हें गाँवों में भी काम आती हैं। इस प्रशिक्षण में उन्हें नर्सरी तैयार करना, जैविक खेती करना, कम पानी से पौधे तैयार करना, सब्जी लगाना, पानी का सही उपयोग, फल और सब्जियों के काटने के बाद बचे हुए कचरे, जूठन और बचे

अंतरराष्ट्रीय सम्मेलनों में भागीदारी

- 1 जुलाई 2006 को साल्जबर्ग, ऑस्ट्रिया में अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में भागीदारी।
- ग्रानाडा, स्पेन में 12-16 जुलाई 2006 को अंतरराष्ट्रीय सौर ऊर्जा सम्मेलन में म.प्र. की प्रथम सोलर रसोई पर वक्तव्य दिया।
- 1 सितंबर 2006 में स्वीडन में अंतरराष्ट्रीय पुस्तक मेला, गोथेनबर्ग तथा वहाँ के कई स्कूलों तथा विश्वविद्यालयों में बरली संस्थान की गतिविधियों पर वक्तव्य दिए।
- जर्मनी के कई विश्वविद्यालयों में सन् 2006 में वक्तव्य।
- काठमांडू, नेपाल में 16-17 अप्रैल 2007 को सोलर कुकर पर शोधपत्र की प्रस्तुति की।
- सन् 2007 में टेरा फाउंडेशन बार्सीलोना, स्पेन में अंतरराष्ट्रीय सोलर कुकिंग एंड फूड प्रोसेसिंग कॉन्फ्रेंस में विशेष वक्ता के रूप में उन्होंने अपनी प्रस्तुति दी।
- भारत सरकार के महिला एवं बाल विकास मंत्रालय द्वारा जुलाई 2007 को सार्क सम्मेलन में निमंत्रण।
- उन्हें कुनशान विश्वविद्यालय, ताईवान में 13 से 15 अक्टूबर 2008 में ग्रीन बिल्डिंग एवं अक्षय ऊर्जा अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में मुख्य वक्ता के रूप में आमंत्रित किया गया था। उन्होंने बरली संस्थान के अनुभव पर आधारित पर्यावरण अनुकूल ऊर्जा कुशल परिसर को विकसित करने तथा पर्यावरण बचाने के लाभ पर प्रस्तुति दी थी। यहाँ सौर ऊर्जा निर्माताओं, नीति निर्धारकों, व्यवसाइयों, वैज्ञानिकों, विकास और शोध से जुड़े हुए लोगों ने उन्हें बहुत सराहा।
- 15 से 18 फरवरी 2011 को श्री जिम्मी मॅकगिलिगन को अपनी पत्नी डॉ. (श्रीमती) जनक पलटा मगिलिगन के साथ भूटान के नामग्येल पोलिटेकनिक में सोलर ड्रायिंग का प्रशिक्षण देने हेतु आमंत्रित किया गया था। यह प्रशिक्षण एसजीआई (सेमडरोप जोनखार इनिशीएटिव) द्वारा आयोजित किया गया था और आज भी वहाँ उनके इस प्रशिक्षण को याद किया जाता है।

जिम्मी सेंटर में सोलर तकनीक का उपयोग।

हुए भोजन से जैविक खाद तैयार करना तथा खेतीबाड़ी से निकले कचरे और रद्दी पेपर को पानी में गलाकर धुआँ रहित कंडे बनाना भी सिखाया जाता है। प्रकृति से जितना लिया जाता है उतना ही उसे लौटाया भी जाना चाहिए। यह प्रकृति का नियम है। यहाँ पर्यावरण विषय को भी उतना ही महत्व दिया गया है जितना अन्य विषयों जैसे साक्षरता, स्वास्थ्य, व्यावसायिक कौशल आदि को दिया गया है। महिलाएँ पर्यावरण के ज्यादा नजदीक रहती हैं। इसीलिए उन्हें पर्यावरण के प्रति जागरूक करना अत्यंत जरूरी होता है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए संस्थान ने पर्यावरण विषय को भी पाठ्यक्रम में शामिल कर एक अभिनव प्रयास किया है ताकि ग्रामीण, आदिवासी महिलाएँ जब यहाँ से प्रशिक्षण लेकर अपने गाँव जाएँ तो वे अपने घर, आस-पड़ोस और गाँव को साफ-सुथरा रखें। अधिक से अधिक पेड़-पौधे लगाएँ, पानी बचाएँ, वृक्षों की रक्षा करें, चूल्हे में जलाने हेतु लकड़ियों का प्रयोग नहीं करें। प्रदूषण रोकने हेतु शौचालय का निर्माण करें। कचरे का सदुपयोग करें, ईंधन की बचत हेतु सोलर कुकर का प्रयोग करें तथा खेतों और बगीचों में जैविक खाद डालें ताकि पर्यावरण शुद्ध रखा जा सके। बरली संस्थान के अनुसार पर्यावरण को बचाना और इसका विकास करना सभी की आध्यात्मिक जिम्मेदारी है। इसलिए संस्थान के सभी कार्य पर्यावरण को ध्यान में रखकर किए जाते हैं।

संस्थान के सभी भवनों के निर्माण में योगदान

संस्थान के सभी भवनों का निर्माण जिम्मी मॅकगिलिगन के मार्गदर्शन में हुआ। कई भवनों को तो उन्होंने अपने करकमलों से बनाया। संस्थान की शुरुआत एक छोटे से भवन के एक कमरे में हुई थी। जरूरत के अनुसार छोटे-बड़े भवन बनते चले गए। सन् 1999 में कार्यालय, लायब्रेरी, स्टाफ निवास आदि बनते चले गए। सन् 2004 में बड़ा हॉल बना। संस्थान ने अपने प्रशिक्षणार्थियों को वे सभी सुविधाएँ भी प्रदान करने की कोशिश की जो आधुनिक शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए जरूरी है और जिनसे उनका समग्र विकास हो सके। खाली और बंजर पड़ी भूमि की ऐसी कायापलट हुई कि यहाँ आज बरली की दुनिया आबाद है। इसे देखकर विश्वास नहीं होता।

...और उनका बिछड़ना

4 अप्रैल 2011 की सुबह श्री जिम्मी और श्रीमती जनक जिस कार से श्रीमती शिरीन गादिया को देखने गुजरात जा रहे थे, उस कार की दुर्घटना उज्जैन के समीप हो गई। श्री जिम्मी दुर्घटना में बुरी तरह से घायल हो गए थे और उन्हें पसलियों, हाथ तथा रीढ़ पर गहरी चोट लगी थी। उन्हें अरविंदो तथा गोकुलदास अस्पताल इंदौर में 18 दिनों तक आईसीयू में भर्ती रखा गया था। उन्हें बचाने के लिए हरसंभव प्रयास किए गए परंतु ईश्वर को शायद कुछ और ही मंजूर था। उन्होंने 21 अप्रैल 2011 को अंतिम साँस ली। श्री जिम्मी मगिलिगन की अंतिम यात्रा में इंदौर शहर के शिक्षाविद, पर्यावरणविद, समाजसेवी, चिंतक आदि सैकड़ों लोग शामिल थे। 23 अप्रैल 2011 को बहाई गुलिस्तान जीतनगर, इंदौर में परिवारजनों तथा मित्रों की उपस्थिति में उनका अंतिम संस्कार बहाई विधानों के अनुसार पूर्ण गरिमा से किया गया। *('बरली की दुनिया' से साभार)*

पुस्तक समीक्षा

दि सिक्रेट लाइफ ऑफ प्लांट्स

पौधों का गुप्त जीवन

पौधे, मिट्टी और प्रकृति का अदृश्य और गुप्त जीवन समझना खेती के लिए जरूरी है। दोनों लेखकों ने इन तीनों पर सारगर्भित पुस्तकें लिखी हैं। दि सिक्रेट लाइफ ऑफ प्लांट्स पढ़कर तो लगता है कि जब हम पेड़ काट रहे होते हैं तो अपने ही पैर पर कुल्हाड़ी मार रहे होते हैं। परमेश्वर ने दिया पौधा हमारे लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है और उस पर खिला फूल सबसे सुंदर निर्मिति है।

लेखक : पीटर टॉम्पकीन-ख्रिस्टोफर बर्ड

पौधा जीवित प्राणी है, वह हलचल करता है, वह गतिमान है। अच्छा-बुरा समझने की उसकी गुप्त शक्ति है। वह आपराधिक व्यक्ति को तुरंत पकड़ लेता है। यदि आप सच्चे मन से उसे चाहते हैं तो वह आपकी सुनता भी है और सबसे अजीब बात यह है कि पौधा बोलता भी है।

सातारा, कोल्हापुर के दिवंगत कृषि विशेषज्ञ श्रीपाद दाभोलकर बचपन से ही पौधों से बतियाते रहे हैं। पौधे की हर चाल से वे वाकिफ थे। इंदौर के प्रकृति प्रेमी गाँधीवादी टी.जी.के. मेनन बता रहे थे कि उनके बगीचे में केरल का पूवन केले का झाड़ था और बगीचे में देसी गुलाब की कलियाँ भी लगी थी। उनके बंगाली दामाद पहली बार घर आने वाले थे। बागप्रेमी मेनन रोज केले और गुलाब से प्रार्थना करते कि मेरे दामाद के आने पर मुझे थोड़े केले और फूल देना और आश्चर्य कि बिल्कुल वैसा ही हुआ।

चार्ल्स डारविन ने यह सिद्ध किया था कि लताएँ जब चाहें तब साथ में खड़े किसी भी दीवार या खंभे पर चढ़ जाती हैं। काई पौधे की करीब डेढ़ करोड़ बारीक जड़ें होती हैं। उनको यदि आपस में जोड़ा जाए तो कुल लम्बाई 380 मील की बैठती है और उन बारीक जड़ों की शिराएँ जमीन के अंदर 6600 मील चली जाती हैं।
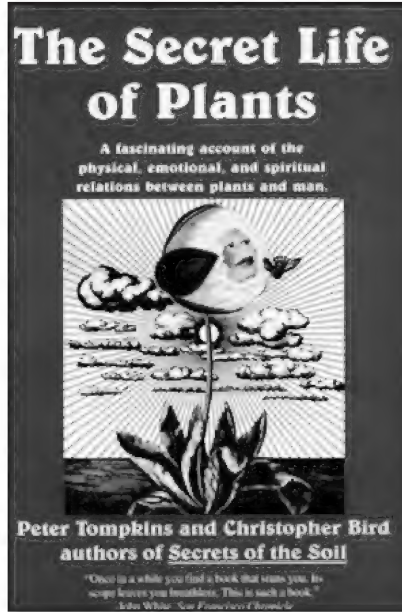
हमारा पूरा अस्तित्व पौधों के कारण है। हर पत्ती के नीचे जो पौधे के होंठ (स्टोमेटा) होते हैं वे दिन-रात कार्बन डाय ऑक्साइड पीते हैं और प्राणवायु मुँह से छोड़ते हैं। हमारा अन्न, कपड़ा, आवास, तेल, औषधियाँ ये सब पौधों से प्राप्त होता है और अब तो बिजली भी।

अमेरिका के सबसे प्रसिद्ध झूठ पकड़ने वाले (लाई डिटेक्टर) क्लीव बॅकस्टर ने ड्रेसिना वनस्पति पर प्रयोग कर यह ग्राफ पर सिद्ध किया कि जब झूठ, फरेबी और आपराधिक वृत्ति का व्यक्ति पास खड़ा हो तो ड्रेसिया के पत्ते तुरंत अपना विरोध दर्ज करते हैं।

सर जगदीशचंद्र बोस वैसे तो भौतिक शास्त्र, मानव शास्त्र और शरीर विज्ञान विशेषज्ञ थे लेकिन पौधों पर उनका जो ज्ञान था उतना शायद उनके पहले या उनके बाद भी किसी के पास होगा, ज्ञात नहीं है। उन्होंने ताजिंदगी पौधों पर प्रयोग किए। उनकी खोज के निष्कर्ष थे कि पौधे और प्राणियों की कोषाओं में कोई फर्क नहीं है। उनकी प्रतिक्रियाएँ एक जैसी होती हैं। यदि पौधे को और जानवर को क्लोरोफार्म सुँघाया जाए तो दोनों बेहोश हो जाते हैं और नारकोटिक वेपर प्रेशर से जाग भी जाते हैं। बिजली का

झटका मनुष्य की तरह पौधों को भी लगता है। मानव जाति की तरह पौधों में भी नर-मादा फूल होते हैं और उनके भी गुप्तांग होते हैं।

पौधों में भी पुरुष जाति की तरह भावनाएँ होती हैं। उस पर कई प्रयोग किए गए हैं। बैकस्टर ने एक दिन अपने डॉबरमन कुत्ते को देशी मुर्गी का (जीवित) अंडा फोड़कर खिलाया। कुत्ते के पास गमले में लगे ड्रेसिना पौधे ने तुरंत अपना विरोध दर्ज किया जो गॅलवेनोमीटर द्वारा पोलीग्राफ पर अंकित हुआ।

यह बिल्कुल गलत धारणा है कि पौधा भूमि से भोजन लेता है। सन् 1600 में इयान बाप्टिस्ट ने 200 पौंड सूखी मिट्टी एक बड़े बर्तन में डालकर उसमें पौधा लगाया और उसे सिर्फ वर्षा का पानी या डिस्टिल वाटर दिया। पाँच साल बाद उन्होंने देखा कि पौधे का वजन 164 पौंड हो गया और मिट्टी का वजन कमोबेश वही रहा।

केरव्रन नाम के वैज्ञानिक ने ताम्बे के तार पर एक स्पेनिश शैवाल फँसाया और उसे मिट्टी का स्पर्श भी होने नहीं दिया। जब शैवाल को सुखाकर और जलाकर उसका विश्लेषण किया गया तब उसमें ताम्बे की मात्रा नगण्य थी लेकिन आयरन ऑक्साइड वही मिला। पौधे को यदि नियमित नमी मिले तो मनचाहे तत्व वह अपने अंदर पैदा कर लेता है तथा उनका परिवर्तन भी कर लेता है। जैसे फास्फोरस को कैल्शियम में, कैल्शियम को फास्फोरस में, मैग्नेशियम को कैल्शियम में, कार्बोनिक एसिड को मैग्नीशियम में और नाइट्रोजन को पोटेशियम में।

1963 में उसने प्रयोग किया द्विदल बीज को मैगनीज साल्ट सॉल्यूशन में उगाया। जब कुछ दिनों बाद बीज का परीक्षण किया गया तब उसमें मॅगनीज मिला ही नहीं। उसकी जगह लोहे ने ले ली थी। ■

प्रयोग परिवार, इंदौर

ऑर्गेनिक फार्मिंग एसोसिएशन ऑफ इंडिया, गोआ के डॉ. क्लाड अल्वारिस की इच्छा है कि इंदौर चूँकि सर अल्बर्ट हॉवर्ड (1872-1940) की जैविक खेती की कर्मभूमि रही है (आई.आई.एम. 1919-1964)। अतः हमें इंदौर को ऑर्गेनिक फार्मिंग एसोसिएशन का केन्द्रीय सचिवालय बनाना चाहिए। प्रयोग परिवार, सातारा (कोल्हापुर) के पुरोधा (स्व.) श्रीपाद अच्युत दाभोलकर भी यही चाहते थे। विगत कई वर्षों की मुलाकात, चर्चा, पत्र व्यवहार और जैविक खेती सीखने की ललक से कुछ किसानों ने प्रयोग परिवार, इंदौर की अनौपचारिक स्थापना वर्ष प्रतिपदा 31 मार्च 2014 को इंदौर में की। 6 अप्रैल 2014 को जतन ट्रस्ट बड़ौदा के श्री कपिल शाह एवं पर्यावरणविद श्री टी.जी.के. मेनन की मौजूदगी में निम्नलिखित सदस्यों ने भाग लिया और चर्चा की।

धीरजसिंह राठौर (सरसी, रतलाम), नानालालजी धाकड़ (रियावन, रतलाम), राजेश जैन (बदनावर, धार), दुलीचंद पंवार (भुवानीखेड़ा, धार), जुझारसिंह सोलंकी (आलोट, रतलाम), हरपालसिंह सोलंकी (आलोट, रतलाम), चन्दरपालसिंह सोलंकी (आलोट, रतलाम), धरमसिंह केलिया मैना (आष्टा, सीहोर), जगदीश यादव (आष्टा, सीहोर), लोभीराम यादव (भौपवाड़ा, खरगोन), मोहनलाल पिरोदिया (रतलाम), डालचंद भाई सुराना (दुर्ग, छत्तीसगढ़), योगेन्द्र कौशिक (उज्जैन), विष्णुकुमार पाटीदार (रांकोदा, रतलाम), संजय पाटीदार (धामेड़ी, रतलाम), देवीलाल जरान्दला (सेमलिया, रतलाम), भँवरसिंह डोडिया (गुड़खेड़ा, रतलाम), दयाराम धाकड़ (खाचरौद, उज्जैन), रवि ठाकुर (सेमल्याचाऊ, इंदौर), राजेन्द्रसिंह बघेल (सोनकच्छ, देवास), राजेन्द्र सिंह राठौर (आम्बा, रतलाम), इंदौर से अरुण डिके, दिनेश कोठारी, अम्बरीश केला, ऋषि तिवारी, सुनील शिन्दे, श्रीमती माधवी जमींदार, विकास छाजेड़ जयेश जायसवाल, एस.जी. कानड़े, डॉ. अनंत ओझा, अजय पटेल, टी.जी.के. मेनन, के.एन. खर्नाल, डॉ. वी.एन. श्रॉफ, डब्ल्यू.आर. देशपांडे, एच.के. खोसला, ओ.एन. सोलंकी, रवि केलकर, अजीत केलकर, एस.के. बायस, शरद चतुर्वेदी, डॉ. अरविंद दाभोलकर, प्रेमसिंह खिंची (देवास)।

प्रसंगवश

जोसेफ कार्नेलियस कुमार अप्पा (1892-1960) पेशे से चार्टर्ड अकाउन्टेंट (सीए) थे। उनकी शिक्षा इंग्लैंड और अमेरिका में हुई थी। उनका रहन-सहन बिल्कुल पाश्चात्य नागरिक जैसा था। लेकिन उनकी विचारधारा शुद्ध भारतीय थी और गाँधी के विचार उन्हें आकर्षित कर रहे थे। वे जितना गाँधीजी के बारे में पढ़ते थे उतना ही उनका देश लौटने का इरादा पक्का हो चला था। अंत में सन् 1929 में वे गाँधीजी से मिले और जल्द उनके निकटतम सहयोगी बन गए। ग्रामीण भारत में उनकी रुचि देखकर गाँधीजी ने उन्हें ग्रामीण विकास का काम सौंपा।

सितंबर 1947 में उन्हें भारतीय कांग्रेस कमेटी की कृषि सुधार समिति का अध्यक्ष बना दिया गया। उन्होंने अपनी रिपोर्ट दिसंबर 1947 में सौंप दी। लेकिन 30 जनवरी को गाँधीजी की निर्मम हत्या हुई और कुमारप्पा की बेशकीमती रिपोर्ट पता नहीं कहाँ गुम हो गई। स्वतंत्रता पश्चात भारत शासन के कृषि एवं ग्राम विकास के कई उच्च पदों पर रहे डॉ. के.पी.ए. मेनन की किताब 'इंडियन एग्रीकल्चर एडमिनिस्ट्रेटिव एंड ऑर्गेनाइजेशनल कंस्ट्रेंट्स' में से लिए गए रिपोर्ट का सार यहाँ दिया जा रहा है।

कृषि सुधार समिति, दिसंबर 1947 (अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी)

अध्यक्ष : जे.सी. कुमारप्पा

मुख्य सुझाव

1. कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में किसान को व्यक्तित्व निखारने का अवसर दिया जाना चाहिए।
2. एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग का शोषण नहीं किया जाना चाहिए।
3. उत्पादन बढ़ाने की पूरी कोशिश की जानी चाहिए।
4. सुधार के तौर-तरीके व्यावहारिक होने चाहिए।
5. भूमि सुधार कार्यक्रम हाथ में लिए बगैर कृषि उत्पादन बढ़ाना संभव नहीं है। राज्य शासन और किसानों के बीच सीधा संवाद होना चाहिए और बीच में किसी का भी हस्तक्षेप न हो।
6. जमींदारी प्रथा समाप्त होने के बाद भी कई लोगों को (खेती छोड़) उस भूमि में रुचि होगी उसे पूरी तरह विफल करना जरूरी है। कुछ अपवाद छोड़ खेती पर केवल किसान का ही अधिकार होना चाहिए।
7. खेत को बटाई पर देने पर पूरी तरह प्रतिबंध लगना चाहिए। अपवाद स्वरूप अल्प आयु वाले, विधवा और विकलांगों को छूट दी जा सकती है।
8. जो स्वयं मेहनत करके खेत जोते और खेती में रुचि ले, उसी को किसान माना जाए।
9. विभिन्न जोतों का आकार देखकर उनके जोतवारों के प्रति विभिन्न दृष्टिकोण रखा जाए।
10. केन्द्रीय स्तर पर खेती की निगरानी के लिए एक ही यंत्रणा हो और उसके अधीन क्षेत्रवार इकाइयाँ हो जिनमें जनता के प्रतिनिधि, शासकीय अधिकारी और कृषि विशेषज्ञ जिम्मेदार माने जाएँ।

जोत के आकार पर समिति की तीन स्तरीय संकल्पना थी

(अ) आर्थिक स्तर : किसान के पास उतनी जमीन हो जो किसान आसानी से जोतकर अपना घर चला सकें और उसके पास कम से कम एक

बैलजोड़ी हो।

(ब) न्यूनतम जोत : आर्थिक स्तर से कम जमीन लेकिन इतनी कम भी नहीं कि किसान अपना परिवार पाल न सके। इस जोत को पुनः स्थापना का भी अधिकार मिले।

(स) अधिकतम जोतः न्यूनतम जोत से तिगुनी केवल।

समिति ने अधिकतर जोत की भी सीमा तय की और तय किया कि किसान के परिवार का आकार देखते हुए हर एक को जमीन सुधार के समान अवसर दिए जाएँ। आर्थिक स्तर पर तय की गई जमीन के आकार से तिगुनी जमीन ही एक किसान के लिए अधिकतम मानी जाए। खेती के लिए भारत कृषक समाज का स्वरूप कैसा हो इस पर समिति ने तय किया कि व्यक्तिगत किसान की खेती को ही भारत कृषक समाज का आधार माना जाए। उसके लिए हर किसान को कम से कम जमीन पर जोत का अधिकार मिलना चाहिए। उसकी जोत का आकार न्यूनतम आर्थिक उपजीविका कमाने इतना होना चाहिए। उससे भी कम जमीन अगर उसे मिले तो संयुक्त सहकारी खेती का विचार किया जाना चाहिए। समिति ने पूँजी आधारित खेती को पूरी तरह नकारा है। राज्य शासित कृषि क्षेत्रों को भी तभी सहमति दी जाए जब पड़त भूमि का विकास करना हो और मजदूरों को वहाँ पर रोजगार मिले।

समिति ने भूमिहीन मजदूरों को रोजगार मिले इसलिए सामूहिक खेती को भी मान्यता दी। इस खेती से किसी का शोषण न हो, गरीब मजदूरों को मुआवजा मिले और उत्पादकता पर विपरीत प्रभाव न पड़े, इसका भी ख्याल रखा जाए। ■

जीवन-दर्शन

बुद्ध ने सिखाई अनासक्ति

भगवान बुद्ध उन दिनों श्रावस्ती के जेतवन में विचरण कर रहे थे। उन्हीं दिनों सुप्पारक तीर्थ में साधु दारुचीरिय पर लोगों की श्रद्धा बढ़ रही थी। वे जहां भी जाते, लोग उनके चरणों में धन-संपत्ति, वस्त्र-उपादानों का ढेर लगा देते। यह देख उन्हें लगने लगा - 'अब मेरा योग सिद्ध हो गया।' इस प्रकार का अहंकार लेकर वह आश्रम लौटे। वृद्ध गुरु की आंखों से उनका यह अहं भाव छिप न सका। उन्होंने दारुचीरिय को पास बुलाकर कहा - 'वत्स, प्रातःकाल के यज्ञ के लिए समिधाएं ले आओ।' दारुचीरिय ने उपेक्षा से कहा - 'भगवन, अब मुझे कर्म करने की आवश्यकता नहीं। मैं अर्हत् मार्ग पर आरूढ़ हो चुका हूं।' 'यह तो बहुत खुशी की बात है।' गुरु ने स्नेह-मिश्रित स्वर में कहा और पूछा - 'आप गौतम बुद्ध को तो जानते हैं?' दारुचीरिय बोले - 'हां महात्मन्, वे इन दिनों जेतवन में परिव्राजक हैं। उन्होंने भी अर्हत् मार्ग सिद्ध कर लिया है।' इस पर गुरु ने कहा - 'तब तो आप उनके एक बार दर्शन अवश्य कर आएं।' दारुचीरिय सुप्पारक से चल पड़े और थोड़े समय में श्रावस्ती जा पहुंचे। जेतवन में बुद्ध तो नहीं मिले, पर वहां उनके अनेक शिष्य-भिक्षुगण विचरण कर रहे थे। बुद्ध के बारे में पूछने पर एक भिक्षु ने कहा - 'महानुभाव, वे भिक्षाटन के लिए गए हुए हैं।' दारुचीरिय आश्चर्यचकित रह गए। इतने भिक्षुओं के होते हुए भी भगवान बुद्ध को भिक्षाटन की क्या जरूरत पड़ गई। वे श्रावस्ती की ओर निकल पड़े। एक सद्गृहस्थ के घर भिक्षा मांगते हुए बुद्ध से उनकी भेंट हो गई। दारुचीरिय ने देखा कि उनके मन में न किसी प्रकार का हर्ष है, न शोक। दारुचीरिय ने उन्हें प्रणाम किया और बोले - 'भगवन्, मुझे बंधन मुक्ति का उपदेश दें।' बुद्ध बोले - 'तात्, आप जेतवन चलें, वहीं बात होगी।' दारुचीरिय ने फिर वही बात दोहराई -'भगवन्, मुझे अनासक्ति का तत्वज्ञान समझाएं। उसे जाने बिना मैं यहां से नहीं जाऊंगा।' तब तथागत बोले - 'तात्, जो एक बार में केवल एक ही कर्म में इतना तल्लीन हो जाता है कि उसकी दूसरी इंद्रियों का भाव ही शेष नहीं रह जाता, ऐसा कर्मयोगी ही सच्चा अनासक्त और अर्हत् आरूढ़ है। पर जिसकी चित्त-वृत्तियां एक ही समय में चारों ओर दौड़ती रहती हैं, वह आसक्ति में लीन रहते हुए दुःखों में भ्रमण करता है।' यह सुनकर दारुचीरिय की सारी भ्रांतियां जाती रहीं और वे कर्म को पूर्ण तन्मयता तथा आत्म-साधना मानकर करने की शिक्षा लेकर लौटे।

यह खाई पाटनी ही होगी

● प्रभाकर पंडित

जैविक खाद्यान्न के उत्पादक किसान और इस खाद्यान्न के सेवन से लाभान्वित होने वाले उपभोक्ता के बीच इतनी चौड़ी खाई है जिसे पाटना अत्यंत आवश्यक है। उत्पादक को यह नहीं मालूम कि उपभोक्ता कौन है और उपभोक्ता नहीं जानता कि जैविक खाद्यान्न का उत्पादक कहाँ है? यह एक निराशाजनक स्थिति है और इसका तोड़ निकालना अत्यंत आवश्यक है।

अभी पिछले सप्ताह टीवी चैनल पर प्रसारित एक कार्यक्रम में जाने-माने टेक्नोक्रेट और प्रधानमंत्री के सूचना प्रौद्योगिकी सलाहकार सैम पित्रोदा को कहते सुना- ''आज स्थिति यह है कि एक ओर बम्पर फसल को रखने के लिए सरकार के पास गोदाम नहीं है, अनाज खुले में पड़ा सड़ रहा है। वहीं दूसरी तरफ जरूरतमंद आबादी भूखी है। यह सरकारी कुप्रबंधन और वितरण प्रणाली की असफलता का आदर्श उदाहरण है।'' यह स्वीकृति आज उस व्यक्ति की ओर से दी गई है जो हमारे देश की सूचना प्रौद्योगिकी का सूत्रधार रहा और आज भी है।

इसी क्रम में कुछ पीछे जाने पर स्मरण होता है कि 1965 का वर्ष हमारे देश के इतिहास में विशेष स्थान रखता है। दो घटनाओं से। एक तो भारत पर पाकिस्तान का आक्रमण, जिसके फलस्वरूप हमारे प्रधानमंत्री ने जय जवान-जय किसान का अनमोल नारा बुलंद किया था जबकि दूसरी घटना थी हरित क्रांति का आगाज, जिसने देश की खेती का परिदृश्य पूरी तरह बदलकर रख दिया।

उपरोक्त उद्धरण देने का तात्पर्य यह है कि समय के साथ हमारी आवश्यकताएँ बदल जाती हैं। हमारी प्राथमिकताएँ बदल जाती हैं। परंतु सरकारी तंत्र इन बदलावों से सरोकार नहीं रखता। अपनी प्राथमिकताएँ नहीं बदलता। खाद्यान्न उत्पादन एवं आपूर्ति का ही उदाहरण लें। बढ़ती जनसंख्या के साथ खाद्यान्न की आवश्यकता बढ़ी और इसके अनुरूप खाद्यान्न उत्पादन भी बढ़ा। खाद्यान्न

उत्पादन बढ़ाने के लिए हरित क्रांति का शॉर्ट कट रास्ता अपनाया गया जिसके घातक परिणाम आगे चलकर सामने आ रहे हैं। 70 के दशक में हमारी तात्कालिक आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए भले ही हरित क्रांति का कंधा मिला हो और इसने हमारा भुखमरी का संकट दूर कर दिया हो परंतु इसे (हरित क्रांति तकनीकी को) लम्बी रेस का घोड़ा मानकर इसकी सवारी करने का हमारे शासन तंत्र का लालच कितना महँगा पड़ रहा है यह जानने के लिए किसी ज्योतिषी के पास जाने की आवश्यकता नहीं। एक खुली किताब की तरह वह हमारे सामने है। अनाज से गोदाम भरे पड़े हैं परंतु उसकी लागत और कीमत पर खरीदने के लिए आमजन के पास पैसा नहीं है। लागत के अलावा इस खाद्यान्न की गुणवत्ता की हम अभी चर्चा नहीं कर रहे हैं। वह एक अलग विषय है परंतु है महत्वपूर्ण। हरित क्रांति की ही देन है रसायनों से ओतप्रोत अनाज, फल, सब्जियाँ और अन्य जिन्सें जिन्हें हम ऊँचे दामों पर खरीदने के लिए मजबूर हैं।

इस कठिन परिस्थिति में जैविक खेती एक आशा की किरण बनकर आई। लगभग डेढ़ सौ साल पहले इसी इंदौर की धरती पर एक अंग्रेज वैज्ञानिक अल्बर्ट हॉवर्ड ने कुछ अनोखे प्रयोग किए और जैविक खेती की नींव रखी। ''तेरा तुझको अर्पण'' की तर्ज पर उसने प्रकृति प्रदत्त संसाधनों के उपयोग से ऐसी तकनीकी विकसित की जो आज भी मौजूं है। आवश्यकता इस बात की थी कि उस तकनीकी को हमारी कृषि व्यवस्था का महत्वपूर्ण अंग बनाकर कम लागत वाला और स्वास्थ्यकर, पौष्टिक, परिपूर्ण (हॉलिस्टिक) खाद्यान्न उपजाया जाता। परंतु ऐसा नहीं हुआ और गत 50 वर्षों में हमने देश की 70 प्रतिशत खेतिहर आबादी का जीवन यापन का जरिया दुरूह कर दिया है।

देश के कुछ छिटपुट इलाकों के किसान कुछ अरसे से प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग से की जाने वाली जैविक खेती का महत्व समझते हैं और इसे अपनाने लगे हैं। इस प्रक्रिया में उन्हें दोहरा लाभ हो सकता है। एक रासायनिक सामग्री- उर्वरक, कीटनाशक, फफूंद नाशक, प्लांट हार्मोन जैसे महँगे आदानों की जगह प्राकृतिक सामग्री खुद बनाए हुए आदान- गोबर खाद, बायोमास की खाद, जैविक कीटनाशी-फफूंद नाशी नुस्खे आदि का उपयोग कर फसल उत्पादन की लागत कम की जा सकती है।

दूसरा इस तरह जैविक पद्धति से उगाई गई स्वास्थ्यप्रद सुस्वादु पौष्टिक खाद्य सामग्री कुछ अधिक दाम पर बेचकर अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है। इस तरीके से सभी देशवासी लाभान्वित हो सकते हैं। उत्पादक किसान जहाँ महँगे रासायनिक आदानों के उपयोग से मुक्ति पा सकते हैं वहीं दूसरी ओर उपभोक्ता को स्वास्थ्यकर रसायनों से मुक्त पौष्टिक खाद्य सामग्री का सेवन कर गंभीर बीमारियों के मकड़जाल से बाहर निकालने का मौका मिलेगा। यह एक आदर्श स्थिति होगी जिसका लाभ देश की 125 करोड़ जनता को मिल सकेगा।

आज स्थिति यह है कि ऐसा होता दिखाई नहीं दे रहा है। जैविक खाद्यान्नों के उत्पादक किसान और इस खाद्यान्न के सेवन से लाभान्वित होने वाले उपभोक्ताओं के बीच इतनी चौड़ी खाई है जिसे पाटना अत्यंत आवश्यक है। उत्पादक को यह नहीं मालूम कि उपभोक्ता कौन है और उपभोक्ता नहीं जानता कि जैविक खाद्यान्न का उत्पादक कहाँ है? यह एक निराशाजनक स्थिति है और इसका हल निकालना अत्यंत आवश्यक है। दुर्भाग्य से शासकीय तंत्र इस सच्चाई से आँखें मूँदकर बैठा है। यह देखकर पहले वर्णित सैम पित्रोदा के शब्द सहसा याद आते हैं। ■

पारम्परिक जल प्रबंधन तकनीक

● डॉ. अनंत ओझा

पुरातन काल में कुएँ से ही घरेलू जल एवं सिंचाई की पूर्ति की जाती थी किंतु मशीनीकरण के कारण जल परियोजनाओं में कुएँ का चलन एक तरह से समाप्त हो गया। इससे जल का दुरुपयोग बढ़ गया तथा भू-जल में अत्यधिक कमी दृष्टिगोचर होने लगी जिससे जल उपलब्धि में असंतुलन निर्मित हुआ।

स्वतंत्रता के पश्चात घरेलू जल की पूर्ति के लिए ग्रामीण व शहरी क्षेत्र में जल प्रदाय योजनाएँ प्रारंभ की गई किंतु यह दुर्भाग्य की बात है कि जल स्त्रोत के दोहन के स्थान पर उसका शोषण बढ़ गया। इसके अलावा जल निकासी व वितरण में मशीनीकरण हावी हो गया व जल की कमी न केवल शहरों अपितु गाँवों में भी दृष्टिगोचर होने लगी। यह एक विडम्बना है कि बिना सोचे-समझे हमने पुरातन पद्धतियों को विस्मृत कर दिया। नई तकनीक के उपयोग के पूर्व हमें यह विश्लेषण करना चाहिए था कि पुरानी पद्धतियों के क्या लाभ हैं?

कुएँ के उपयोग से जल पूर्ति के कई लाभ थे जिससे हम वंचित हो गए तथा जल का अपव्यय बहुत बढ़ गया और भू-जल में कमी आ गई। मध्यप्रदेश शासन ने ८० के दशक के पूर्वार्द्ध में अविभाजित मध्यप्रदेश में लघु सिंचाई प्रारंभ की जिससे कई लाभ प्राप्त हुए। यह कार्यक्रम का क्रियान्वयन सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों को सौंपा गया। इसके मुख्य भाग थे :-

1. नए कुओं का निर्माण
2. पुराने कुओं की मरम्मत
3. ग्रामीण विद्युतीकरण योजना के अंतर्गत जल निकास हेतु उपकरण
4. खेत में सिंचाई हेतु प्रणाली विकसित करना

इस दौरान शासन ने किसानों के लिए अनुदान की व्यवस्था भी की जिससे परियोजना लागत अत्यधिक कम हो गई। इस पूरी परियोजना के लिए एक पुख्ता प्रणाली विकसित की गई जिससे परियोजना का निरंतर मूल्यांकन सभी स्तरों पर किया जा सके। इस हेतु विकासखंड पर मासिक बैठकें, जिला स्तरीय मासिक बैठकें एवं जिला स्तरीय वार्षिक समीक्षा बैठकें आयोजित की जाने लगीं। इसके अलावा संस्थागत वित्त विभाग के तत्वावधान में

प्रतिवर्ष राज्य स्तरीय समीक्षा बैठक भी आयोजित की जाने लगी। अग्रणी योजना के अंतर्गत सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया भी प्रतिवर्ष राज्य स्तरीय बैंकर समिति की बैठक आयोजित करती थी। इन सभी स्तरों पर ग्रामीण विकास की सभी बैंकों में संबंधित योजनाओं पर गहन विचार किया जाता था व सुधारात्मक उपायों को भी लागू किया जाता था।

इस योजना को वर्ष 80 के उत्तरार्ध तक सही परिप्रेक्ष्य में लागू किया गया। तत्पश्चात शनै-शनैः बोर प्रणाली पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा जिससे जल उपलब्धि में असंतुलन दिखाई देने लगा। यह कार्य वैज्ञानिक आधार पर नहीं हो पा रहा था जिससे भूजल में

कमी आने लगी। इसके अलावा सार्वजनिक बैंकों ने भी इसमें रुचि लेना कम कर दिया जिससे परियोजना पर प्रतिकूल असर पड़ा। अब समय आ गया है कि एक नई परियोजना बनाई जाए जिससे पारंपरिक ज्ञान को ध्यान में रखते हुए जल का सही उपयोग किया जा सके जिससे सिंचाई व्यय में तो कमी आएगी ही, अपितु सिंचाई क्षमता में भी वृद्धि होगी। यह समझना अत्यधिक आवश्यक है कि भूजल भारत की जल की पूँजी है तथा सही जल उपयोग से ही सभी जल स्रोतों से उचित लाभ पाया जा सकता है। जल के सही उपयोग से ही हम वांछित लाभ प्राप्त करने में सीम हो पाएँगे जो लंबे समय तक जल पूर्ति सुनिश्चित कर सके। इस समस्या के निदान के लिए तीन प्रमुख बातों का ध्यान आवश्यक है :-

1. वर्तमान में उपलब्ध भूजल के बचाव के लिए वैज्ञानिक आधार तैयार करना ताकि स्थानीय जल स्रोतों का, पोखरों का व नदियों का सही मायने में उपयोग किया जा सके।
2. ऐसी बहुउद्देश्यीय प्रणाली का उचित विकास जिससे जल उपयोग की क्षमता का भरपूर उपयोग हो सके।
3. कानूनसम्मत प्रणाली का विकास करें ताकि दुरुपयोग पर बिना किसी व्यवधान से रोक लग सके व भूजल का सही दोहन सुनिश्चित किया जा सके। यह प्रक्रिया सामाजिक स्तर पर अपनाने हेतु सार्थक प्रयास कर नए कानून बनाए जाने चाहिए जो त्वरित कार्यान्वित किये जा सकें। शासन को चाहिए कि भूजल दोहन की सही प्रणाली विकसित की जाए।

यह उचित होगा कि अन्य राज्यों में लागू कार्यक्रमों का भी अध्ययन किया जाए ताकि इसे मध्यप्रदेश में स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप लागू किया जा सके। इसका एक उदाहरण ग्राम रालेगण सिद्धि (अहमदनगर जिला, महाराष्ट्र) में पहाड़ों पर निर्मित स्टापडेम है जिससे जल का उपयोग सही मायने में किया जा सका। इससे भूजल स्तर में सुधार हुआ। इन स्टापडेमों से किसान आवश्यकतानुसार उचित मात्रा में जल प्राप्त कर सके। एक और महत्वपूर्ण बात यह है कि फसल चक्र का निर्धारण करते समय जल की उपलब्धता को ध्यान में रखा गया। इस क्षेत्र में मटका सिंचाई पद्धति का भी वैज्ञानिक उपयोग किया गया। आधुनिकीकरण की अंधी दौड़ में हम जल का दुरुपयोग कर रहे हैं। फव्वारा व टपक सिंचाई पद्धति स्थापित करने के पूर्व स्थानीय प्रणालियों का लेखाजोखा कर यह सुनिश्चित करना होगा कि जल का सही उपयोग हो रहा है या नहीं। मटका सिंचाई पद्धति संतरे के बगीचे के लिए कारगर साबित हुई। इससे जल की बचत हो पाई, खेत में निरंतर सही नमी बनी रही तथा कम जल में अधिक लाभ मिल सका। इस प्रणाली का एक लाभ यह भी है कि भूमि का कटाव रोका जा सका। इससे जल की बचत के साथ स्थानीय कारीगरों को भी रोजगार मिला।

इस परियोजना में इन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है :-

1. कृषि उपयोग 2. औद्योगिक उपयोग 3. घरेलू उपयोग।

इस हेतु यह भी आवश्यक है कि वैज्ञानिक आधार पर जल प्रबंधन एवं संवर्धन तकनीक विकसित की जाए जो स्थान विशेष भौतिक एवं हाईड्रोलॉजिकल स्थिति के अनुरूप हो। इस कार्यक्रम को राजीव गाँधी वॉटर शेड मिशन के अंतर्गत लागू किया जाना चाहिए। इस प्रक्रिया में एकीकृत प्रणाली का विकास आवश्यक है जिसमें निम्न बातों का ध्यान रखा जाए :-

1. स्थान विशेष में काम में ली जाने वाली प्रणालियों का वैज्ञानिक आधार पर अध्ययन, जिसमें आर्थिक व सामाजिक पहलुओं का समावेश हो।
2. ग्रामीण तालाबों व पोखरों का सही परिप्रेक्ष्य में प्रबंधन किया जाना चाहिए। यह दुर्भाग्य की बात है कि इन स्त्रोतों को हमने दरकिनार कर दिया है जिससे जहाँ एक ओर रोजमर्रा के कार्य के लिए जल की उपलब्धता पर प्रतिकूल असर पड़ रहा है वहीं दूसरी ओर इस हेतु कोई ठोस कानूनों के अभाव के कारण इन स्त्रोतों का दुरुपयोग नहीं रोका जा रहा है जिससे स्थानीय स्तर पर जल की पूर्ति प्रभावित हो रही है। स्वतंत्रता के पूर्व इस हेतु स्थानीय शासक पूरा ध्यान देते थे। उदाहरणार्थ बाँसवाड़ा राज्य में महाराज ने इस हेतु कठोर नियम बनाए थे जिससे जल का सही उपयोग हो। वर्तमान में एक बड़ी समस्या इन स्त्रोतों के क्षेत्र में अनाप-शनाप निर्माण कार्य है जिससे इनका क्षेत्र कम होता जा रहा है। होलकर राज्य इंदौर में कान्ह (खान) नदी एक गंदा नाला हो गया है जबकि वर्ष 1958 तक इसमें निर्मल पानी बहता था। इसका मूल कारण नदी के केचमेंट क्षेत्र में कमी है। इस नाले में गंदगी डालने पर कोई प्रतिबंध नहीं है। अब हालत यह है कि यहाँ भयंकर दुर्गंध आती है जिससे इंदौर शहर का वातावरण दूषित होता जा रहा है।
3. यह सही है कि आज के परिप्रेक्ष्य में कुआँ खोदना अव्यावहारिक है किंतु जहाँ संभव हो वहाँ जीर्ण-शीर्ण कुओं की मरम्मत की जा सकती है व स्थानीय स्तर पर जल की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है।
4. मध्यप्रदेश, राजस्थान जैसे राज्यों में बावड़ियाँ थी जिससे स्थानीय स्तर पर विपरीत मौसम में भी जल की उपलब्धता बनी रहती थी। यदि इन बावड़ियों के रखरखाव पर ध्यान दिया जाए तो कुछ हद तक जल की समस्या से निजात मिल सकती है। बावड़ी सुधार कार्यक्रम लागू किया जाना चाहिए।
5. आपको जानकर आश्चर्य होगा कि जनजाति क्षेत्र में पारंपरिक तरीकों से गुरुत्वाकर्षण के विरुद्ध जल स्त्रोत से जल उठाया जाता था। आलीराजपुर जिले में आज भी कुछ स्थानों पर यह तरीका काम में लिया जाता है। इसमें मुख्य रूप से स्थायी ऊर्जा

का उपयोग कर उसे चलायमान ऊर्जा में परिवर्तित किया जाता है जिससे जल धीरे-धीरे ऊपर की ओर उठने लगता है। इस हेतु सर्वेक्षण किया जाना चाहिए व जहाँ संभव हो, इस प्रणाली का उपयोग किया जाना चाहिए।
6. पारंपरिक जल उठाव उपकरण विलुप्त होते जा रहे हैं जिससे जल के दुरुपयोग में बढ़ोतरी हो रही है। इनमें मुख्य थे रहट, चरस, ढेकुली इत्यादि। ये सभी प्रणालियाँ स्थान विशेष के लिए बहुत कारगर थी। इन पर ध्यान देना चाहिए।
7. पारंपरिक जल संवर्धन तकनीक का उपयोग जनजाति क्षेत्र में बहुतायत से किया जाता था किन्तु अब इस पर ध्यान नहीं दिया जाता। इन तकनीकों को अव्यावहारिक मानना घातक है। स्थान विशेष भौगोलिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए आज भी जहाँ संभव है वहाँ इन तकनीकों का उपयोग संभव है।

8. फसल चक्र में जल की मात्रा ज्ञात करना आवश्यक है ताकि जल का अपव्यय रोका जा सके। राजस्थान के शेखावटी क्षेत्र में जहाँ वर्षा अधिकतम 5 इंच तक होती है वहाँ यह पारंपरिक तकनीकें आज भी कारगर हैं। इस हेतु वृहद अध्ययन की आवश्यकता है। हमारी मानसिकता का आधार जल का दुरुपयोग है। हम कई किलोमीटर से जल सिंचाई हेतु खेत में लाने का प्रयास करते हैं किन्तु हम जल स्रोत के पास जाने से कतराते हैं। जनजातियों की यह सोच कितनी सार्थक है कि हमें जिसकी आवश्यकता है उसके पास जाना चाहिए न कि उसे येन-केन प्रकारेण अपने पास लाना चाहिए। किसानों को इस हेतु जागरूक करना होगा व हमारी प्रचार-प्रसार तकनीक में इसका समावेश किया जाना चाहिए। यह ध्यान रखना होगा कि प्रत्येक फसल की आवश्यकता उसकी जाति, प्रजाति व मृदा के प्रकार पर निर्भर करता है। कुछ फसलों की जल आवश्यकता निम्नानुसार है :-

फसल का नाम	**जल की आवश्यकता (मिमी)**
धान	900-2500
गेहूँ	450-560
ज्वार	450-650
मक्का	500-800
गन्ना	1500-2500
मूँगफली	500-700
कपास	700-1300
सोयाबीन	450-700
तम्बाखू	400-600
टमाटर	600-800
आलू	500-700
प्याज	350-550
मिर्ची	500
सूरजमुखी	350-500
अरंडी	500
फलियाँ	300-500
पत्तागोभी	380-500
मटर	360-500
केला	1200-2200
संतरा	900-1200
अनानास	700-1000
जिन्जेली	350-400
रागी	400-450
अंगूर	500-1200

अब समय आ गया है कि समयबद्ध तरीके से योजना बनाकर सही परिप्रेक्ष्य में योजना बनाई जाए ताकि पारंपरिक तरीकों का भरपूर उपयोग किया जा सके जिससे लाभ-हानि का सही आकलन हो सके। इस हेतु यदि निजी क्षेत्र के साथ उपक्रम बनाकर कार्यक्रम लागू किया जाए तो यह उचित होगा। इस हेतु संस्थागत वित्त विभाग पहल करे तो ठीक रहेगा। यदि जिला स्तर पर निम्न संगठनों का समूह यह कार्य करे तो शीघ्र लाभ मिल सकता है।

1. संस्थागत वित्त विभाग, मध्यप्रदेश शासन
2. राज्य स्तरीय बैंकर्स समिति जो मध्यप्रदेश में सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया है
3. राज्य कृषि संचालनालय
4. पंचायत राज्य प्रतिनिधि
5. राष्ट्रीय ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड)
6. केन्द्रीय कृषि यांत्रिकी संस्थान,नवीबाग, भोपाल
7. कृषि विश्वविद्यालयों के प्रतिनिधि
8. सिंचाई संचालनालय
9. केन्द्रीय भूजल बोर्ड
10. सेवानिवृत्त तकनीकी व्यक्ति
11. गैर शासकीय संस्थाएँ

इस सूची में और भी नाम बढ़ाए जा सकते हैं किंतु इस बात का ध्यान रखना होगा कि इन संगठनों/संस्थानों से पूरा योगदान प्राप्त हो। ■

जड़ी-बूटी एवं वानस्पतिक तेल कीट नियंत्रण का प्राकृतिक उपाय

● आर.के. जैन

कीट समस्या फल, फूल, सब्जी से लेकर लगभग हर फसल में होती है। माऊ (एफिड), मकड़ी, सफेद मक्खी, मिली बग व थ्रिप्स प्रमुख रस चूसक कीट हैं। वहीं तम्बाकू, कपास व अरंडी की इल्ली प्रमुख फसल भक्षी कीट हैं। इन सभी कीटों से प्रतिवर्ष अत्यधिक फसल नुकसान होता है। यूँ तो इनके नियंत्रण के लिए तमाम रासायनिक कीट बाजार में उपलब्ध हैं किंतु यह अत्यधिक महँगे, अपूर्ण कारगर के साथ-साथ इनसे स्वास्थ्य पर होने वाले हानिकारक प्रभाव के बारे में पूरी दुनिया जान चुकी है।

प्रयोगों द्वारा देखने में आया है कि कुछ वानस्पतिक पौधों पर कुछ हानिकारक कीटों का बिल्कुल भी प्रकोप नहीं देखा गया है। अतः उनसे निर्मित तेल में वे जरूरी तत्व मौजूद रहते हैं जो हानिकारक कीटों का नियंत्रण करने के लिए पर्याप्त हैं। नीम तेल, करंज तेल, सीताफल बीज का तेल, लहसुन का तेल, करेला तेल, मेहन्दी तेल व नींबू घास के तेल (सिट्रोनेला) में हानिकारक कीट नियंत्रण की पर्याप्त क्षमता पाई जाती है। प्रयोगशाला में अध्ययन व खड़ी फसल पर स्प्रे के अध्ययन के आधार पर विभिन्न वानस्पतिक तेल की निम्नानुसार मात्रा का उपयोग करके प्रभावी कीट नियंत्रण संभव है।

- नीम तेल 250 मिली, करंज तेल 250 मिली को 100-200 लीटर साबुन के पानी में घोल बनाकर स्प्रे करने से माहू तुरंत नियंत्रित होती है। इसे 7 दिन बाद पुनः प्रयोग करें।
- नीम व करंज तेल में यदि लहसुन तेल 1 मिली व मेहन्दी का तेल 20 मिली व नींबू घास का तेल 30 मिली और मिलाकर 100-200 लीटर साबुन के पानी में घोल बनाकर स्प्रे करने से माहू के साथ-साथ मिली बग, थ्रिप्स, मकड़ी आदि रस चूसक कीड़ों को तुरंत नियंत्रित किया जा सकता है।
- यदि नीम तेल व करंज तेल के साथ सीताफल बीज का तेल 50 मिली व करेले का तेल 50 मिली मिलाकर उसे 100-200 लीटर साबुन के पानी में घोल बनाकर स्प्रे करें तो फसलों को सफाचट करने वाली इल्लियों जैसे कपास, चने की हरी इल्ली, तम्बाकू सोयाबीन की काली इल्ली के साथ-साथ, अरंडी की सेमीलूपर इल्लियों पर भी प्रभावी नियंत्रण संभव है। उपरोक्त घोल को 10-15 दिन बाद पुनः स्प्रे किया जा सकता है।

उपरोक्त वानस्पतिक तेलों के अलावा पुदीना, तुलसी, यूकेलिप्टस, जायफल इत्यादि वनस्पतियों में भी कीट रोकथाम की प्रभावी क्षमता होती है।

(वरिष्ठ वैज्ञानिक, इंदौर बायोटेक इनपुट्स एवं रिसर्च प्रा.लि., इंदौर)
मो. 09827011788

खेती-किसानी खबरें

जैविक कपास पर अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी

इंदौर। दिनांक 19 एवं 20 मार्च को स्थानीय रेडिसन ब्लू होटल में जैविक कपास का उत्पादन, प्रक्रिया एवं विपणन पर एक अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया था जिसमें करीब 170 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। भारत विश्व का सबसे बड़ा जैविक कपास उत्पादक देश है और विश्व की 70 प्रतिशत जैविक कपास की माँग पूरी करता है। कृषि रसायनों एवं बीटी जैसे जीन रूपांतरित कपास ने विदेशों में कई प्रकार के चर्मरोगों को बढ़ाया है इसलिए वे लोग भारत द्वारा उत्पादित जैविक कपास से बनाए कपड़ों के लिए लालायित हैं।

इंग्लैंड की कॉटन कनेक्ट कंपनी ने यूरोप की सी एंड ए, डौल फाउंडेशन और अमेरिका की टेक्सटाइल एक्सचेंज के सहयोग से पूरे विश्व में जैविक कपास का और कपड़ों का जाल फैला रखा है। उनका मुख्य उद्देश्य इस प्रकार है :-

1. गैर बीटी कपास के बीजों का संग्रहण और वितरण।
2. बीटी कपास से फैले कपास के प्रदूषण को कैसे रोकें और जैविक कपास के प्रति प्रतिबद्धता।
3. नीति एवं निर्धारण।
4. वितरण व्यवस्था।
5. कपास उत्पादन का उचित प्रबंधन और ऐसे मॉडल फार्म तैयार करना।

इंदौर की प्रतिभा सिंटेक्स जो भारत से जैविक कपड़े निर्यात करने वाली कंपनी है, उसके दिशानिर्देश में यह संगोष्ठी हुई थी। इसमें कपास उत्पादक, विपणन करने वाले कृषि वैज्ञानिक तथा कृषि विभाग के अधिकारियों ने भाग लिया। चर्चा सत्र का उद्घाटन कार्टेन कनेक्ट के मुख्य कार्यपालन अधिकारी एल्सिन वार्ड, सी एंड ए की कार्यपालन संचालक लेसली जॉन्स्टन और म.प्र. कृषि विभाग के पूर्व संचालक डॉ. जी.एस. कौशल ने किया था। जैविक कपास छोटी जोत में उगाया जाता है और किसान उसके साथ अन्य फसलें भी लेता है। अतः उसे गैर बीटी कपास का बीज उपलब्ध कराकर शुद्ध जैविक कपास पैदा करना सबसे बड़ी समस्या है।

पर्यावरण संरक्षण पर व्याख्यानमाला संपन्न

इंदौर। पर्यावरण संरक्षण अनुसंधान एवं विकास केन्द्र द्वारा गत दिनों पंचम पर्यावरण संरक्षण व्याख्यानमाला का आयोजन किया गया। व्याख्यानमाला का विषय 'जैविक खेती- किसान और उपभोक्ता मंच' था। व्याख्यानमाला में विनोबा आश्रम गोत्री वड़ोदरा के **कपिल शाह** ने अपने व्याख्यान में कहा कि पर्यावरण की दृष्टि से विश्व अनेक संकटों से गुजर रहा है। वातावरण में बदलाव और जैव विविधता का नाश इन दोनों की चुनौती इतनी बड़ी है कि जमीन, पानी, हवा के प्रदूषण-खनन जैसी महत्वपूर्ण बातें भी नगण्य लग रही है। शायद पहली बार यह महसूस हो चुका है कि कृषि विकास के लिए "Business as usual is not an option"। यूनाइटेड नेशन्स की पिछले दो साल की तमाम रपटें यह कह रही हैं कि कृषि को बचाने के लिए कोई नया चिरंजीव और टिकाऊ रास्ता ही ढूँढना पड़ेगा। भारत का जैविक खेती (Organic Farming) आंदोलन एक चौराहे पर खड़ा है। एक तरफ भारत का किसान खुदकुशी कर रहा है और खेती करने के लिए नई पीढ़ी तैयार नहीं हो रही है। दूसरी तरफ जैविक कृषि का चार दशक पुराना अनुभव हमारे पास है जो विश्वास दिलाता है कि कृषि विकास का यही रास्ता ठीक है। तीसरी तरफ भारत वर्ष से शुद्ध, सात्विक और प्रदूषण मुक्त अन्न के बारे में अभूतपूर्व जागृति आ चुकी है और जनता का एक महत्वपूर्ण हिस्सा Organic Farming पसंद कर रहा है। चौथी तरफ जीन परिवर्तित फसलें आ रही हैं और इसे लाने के लिए हरित कृषि के समय की दलीलें पेश की जा रही हैं।

इस चौराहे पर खड़े आंदोलन में उपभोक्ता और उत्पादक कृषक दोनों की जिम्मेदारी और बढ़ रही है। उपभोक्ता जो पसंद करेंगे उसे किसान उगाएँगे। और सरकारों को ऐसी ही नीति, विज्ञान, प्रौद्योगिकी का प्रयोजन करना होगा। सजीव कृषि आंदोलन सिर्फ तकनीकी बदलाव नहीं, बल्कि एक वैकल्पिक दर्शन की बुनियाद वाला विज्ञान, प्रौद्योगिकी और अर्थशास्त्र है। सजीव कृषि को बाजार की ऐसी नई व्यवस्था के साथ जोड़ना होगा जो मुनाफे की गिनती सिर्फ आर्थिक मानदंडों से नहीं, बल्कि पर्यावरण, स्वास्थ्य, सामाजिक और टिकाऊ मानदंडों को साथ लेकर करें।

देश का विकास कृषकों और ग्रामीण समाज के विकास के बिना असंभव है और इसके लिए जैविक खेती एकमात्र रास्ता है। यह बात संभव होगी न केवल उपभोक्ता से, न केवल किसानों से। हमें चाहिए एक मजबूत किसान-उपभोक्ता मंच। सारा हिन्दुस्तान आज ऐसे मंच से उभर रहा है। मध्यप्रदेश और इंदौर भी इसी में शामिल है।

जतन ट्रस्ट विनोबा आश्रम, वड़ोदरा के श्री कपिल शाह

गोत्री वड़ोदरा में डेढ़ एकड़ में फैला विनोबा आश्रम जैविक खेती के उत्पादन, विपणन और प्रचार-प्रसार का बहुमूल्य स्थान है। इसके मुख्य संचालक कपिल शाह ने प्लांट ब्रिडिंग और जिनेटिक्स में स्नातकोत्तर पदवी ली थी। उनके पिता जगदीश शाह सर्वोदय के प्रसिद्ध कार्यकर्ता रहे हैं। उन्हीं की प्रेरणा से कपिल भाई ने कई अंतरराष्ट्रीय बीज, खाद एवं कीटनाशक कंपनियों की नौकरी का बुलावा अस्वीकार कर दिया और कुछ साल गाँधीनगर के पास अम्रापुर में ग्राम भारती में व्याख्यात रहने के बाद उसे भी छोड़ दिया। फिर वे 1986 में पूरे तन-मन-धन से जतन ट्रस्ट से जुड़ गए।

कपिल भाई ने वन मेन आर्मी बनकर जी.एम. फसलों की लड़ाई गुजरात में लड़ी। जी.एम. फसलों के बीज पैदा करने वाली कंपनियों के खिलाफ उन्होंने मोर्चा खोला। किसानों को, कृषि वैज्ञानिकों को, शासन को और गृहिणियों को जी.एम. फसलों के दुष्परिणामों से परिचय कराया। जैविक खेती को कपिल भाई ने नया नाम दिया- सजीव खेती। इस विषय पर उन्होंने कई पुस्तकें भी लिखी और प्रकाशित की। जैविक खेती पर ठोस कार्य कर रही ऑर्गेनिक फार्मिंग एसोसिएशन ऑफ इंडिया, गोआ के वे सचिव हैं तथा सजीव खेती के प्रचार के लिए देश-विदेशों में भ्रमण करते रहते हैं।

कचरे से तैयार करें उत्तम खाद

भारतीय कृषि क्षेत्र में पिछले चार दशकों से फसल उत्पादन में जो वृद्धि आई है, इसका मुख्य कारण उन्नत तकनीकों को अपनाया जाना और अधिक मात्रा में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग है। अपनी जरूरतों को पूरा करने के लिए इन कृत्रिम पदार्थों का भारी मात्रा में प्रयोग किया जा रहा है। मिट्टी की स्थिति की अनदेखी की जा रही है। इसके कई दुष्परिणाम हमारे समक्ष धीरे-धीरे प्रकट हो रहे हैं। मिट्टी के प्राकृतिक गुण धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। इसके अलावा प्राकृतिक गुण के अभाव में उत्पादन लागत में वृद्धि हो रही है। मिट्टी में जीवांश या कार्बनिक पदार्थों की कमी के कारण गर्मियों में भूमि के ऊपरी भाग का तापमान 60 डिग्री सेल्सियस से ऊपर हो जाता है। मिट्टी की नमी ज्यादा देर तक नहीं रहती है। इससे खेतों में दरारें पड़ने लगती हैं। निम्न जल धारण क्षमता के कारण सिंचाई जल की आवश्यकता बहुत अधिक बढ़ जाती है और संसाधनों का दुरुपयोग होता है। कृषकों को यह बात जानना अति आवश्यक है कि मिट्टी एक भौतिक माध्यम ही नहीं, अपितु जीवित माध्यम भी है, जिसमें असंख्य लाभकारी सूक्ष्म जीव निवास करते हैं, जो विभिन्न तरीकों से पौधों का पोषण करते हैं। अतः मिट्टी में इनकी संख्या सुनिश्चित करना अति आवश्यक है, जो जीवांश या कार्बनिक पदार्थों द्वारा ही संभव है। इसके लिए प्रत्येक कृषक को ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए जिससे उनके फार्म पर या घर में उपलब्ध कूड़ा-कचरा, जानवरों के मल-मूत्र, पौधों के अवशेष आदि का उपयोग एक उत्कृष्ट प्रकार के कंपोस्ट बनाने में काम आ सकें।

अधिकांश किसानों के बाड़ी या प्रक्षेत्र में स्वनिर्मित खाद के गड्ढे होते हैं। कृषक इस गड्ढे का उपयोग खाद बनाने में करते हैं। यहां घर के अपशिष्ट और फार्म के कचरे का इस्तेमाल खाद बनाने में करते हैं। ठीक प्रकार से न सड़ने के कारण उसमें खरपतवार के बीज और निमेटोड पाए जाते हैं, जो फसलों के लिए नुकसानदेह हैं। खाद बनाते समय इसे खुला छोड़ दिया जाता है और अत्यधिक गर्मी और बारिश से बचाव की सुविधा नहीं होती है। इन कचरों का उपयोग व्यवस्थित और वैज्ञानिक रीति से न होने के कारण खाद की गुणवत्ता निम्न स्तर की होती है, जिसमें जीवांश और पोषक तत्वों की मात्रा कम होती है। किसान बहुत कम खर्चे में स्वयं जैविक खादों का उत्पादन कर सकते हैं। इनके पास उपलब्ध खाद गड्ढा अच्छी गुणवत्ता वाली खाद प्राप्त करने का अच्छा माध्यम हो सकता है, जिसे कंपोस्टिंग (सड़न) की अत्यंत सरल प्रक्रिया द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

खाद बनाने हेतु प्रयुक्त सामग्री

पौधों की पत्तियों, टहनियों, डंठल, भूसा, पैरा कुट्टी, घर से प्राप्त सब्जियों के टुकड़े आदि को छोटे-छोटे काटकर बाँट देना चाहिए। घर और खेत पर उपलब्ध जानवरों के गोबर को उनके मूत्र के साथ एकत्रित करना चाहिए। जानवरों के बिछावन को इकट्ठा करने के लिए पशुशाला में भूसा, लकड़ी बुरादा या रेत का बिछावन बिछाना चाहिए और इसे 10-15 दिनों में हटाते रहना चाहिए। जानवरों के मूत्र को सामान्य कांक्रीट टैंक में इकट्ठा करते रहना चाहिए।

गोबर और कचरा संग्रह करने का तरीका

खाद के गड्ढे को भरने से पूर्व उसे घर या प्रक्षेत्र पर पहले अलग-अलग एकत्रित करना चाहिए। इसके लिए दो छोटे और गहरे गड्ढे बनाए जाते हैं। इन गड्ढों में मल-मूत्र और इनका बिछावन और वानस्पतिक कचरे को अलग-अलग गड्ढों में इकट्ठा किया जाता है। पौध अवशेष, पत्ती, टहनी, डंठल, घर से प्राप्त सब्जी के टुकड़े को बारीक कर गड्ढे में नियमित रूप से गोबर के घोल से तर करके मिलाते रहना चाहिए। इन पदार्थों से पत्थर के टुकड़े, प्लास्टिक इत्यादि को अलग कर देना चाहिए।

खाद गड्ढे का आकार 6 मीटर लंबा, डेढ़ मीटर चौड़ा और एक मीटर गहरा होना चाहिए। हालांकि पशुधन की संख्या और आवश्यकतानुसार आकार को छोटा-बड़ा कर सकते हैं। गड्ढे का आकार यदि बड़ा हो तो उसे 2 या 3 बराबर भागों में बाँट लेना चाहिए। खाद भरते समय जब पहला भाग भूतल से 45 सेमी ऊँचा हो जाए तो उसे ढेर के रूप में बनाकर गोबर के घोल व मिट्टी से ढँक देना चाहिए। फिर गड्ढे के शेष भाग में इसी तरह खाद भरना चाहिए। इससे वर्ष भर खेतों को उच्च गुणवत्ता वाली कंपोस्ट खाद की पूर्ति होती है। गड्ढों का चुनाव छायादार स्थान पर करना चाहिए और खाद बनाते समय नमी की पर्याप्त मात्रा होना आवश्यक है। गड्ढे के विभिन्न भागों के उपयोग के लिए समय नियोजित करना आवश्यक है, ताकि हर फसल के लिए खाद उपलब्ध हो सके।

खाद बनाने की वैज्ञानिक विधि

जानवरों के मल-मूत्र, बिछावन और वनस्पति कचरों का संग्रह तब तक इन छोटे-छोटे गड्ढों में करना चाहिए जब तक कि दिए गए गड्ढों के आकार के अनुसार पूर्ति न हो जाए। गड्ढे भरने के पूर्व इन पदार्थों में प्रति क्विंटल कचरे की दर से एक किलोग्राम रॉक फास्फेट का प्रयोग करना चाहिए, जो कि सस्ता और आसानी से उपलब्ध हो जाता है।

संग्रहित कचरों का उपयोग गड्ढों के पहले भाग में भराई हेतु विभिन्न परतों में डालना चाहिए। सर्वप्रथम गड्ढों की साफ-सफाई कर उसकी सतह को मिट्टी या बालू से दबाकर ठोस बनाएँ, फिर उसे गोबर के घोल से तर करें। इसके बाद पहली परत के रूप में वनस्पतिक कचरे को तीन से चार इंच परत में एक समान बिछाएँ, जिसे गोबर के घोल से तर करें। इसी क्रम में गड्ढा भराई को पूर्ण करें। भराई का कार्य भूतल सतह से 45 सेमी. ऊँचा करें। फिर उसे ढेरी बनाकर मिट्टी और गोबर के घोल से लीप दें। बिल्कुल यही प्रक्रिया गड्ढे के शेष भाग में दोहरानी चाहिए, जिसके बनाने का क्रम निश्चित करें। अपघटन प्रक्रिया के लिए सत्तर फीसदी नमी होनी चाहिए, जिसकी पूर्ति के लिए नियमित जल दें। 20 से 25 दिनों बाद जब गलन प्रक्रिया से उत्पन्न गर्मी कम हो जाए, तब खाद की विभिन्न परतों में सूक्ष्म जीव ट्राइकोडर्मा विरडी का छिड़काव करें। यह बाजार में आसानी से उपलब्ध है। इससे खाद की गलन क्रिया और गुणवत्ता में वृद्धि होती है।

6 से 8 दिनों बाद खाद पलटने का कार्य करें। इसमें प्रत्येक परत का पलटा जाना आवश्यक है। खाद पलटने की प्रक्रिया तीन बार हर पंद्रह दिनों में करें। यह क्रिया ढाई माह तक करते रहें। अंतिम बार पलटने के समय जैव उर्वरक जैसे राइजोबियम (दलहन फसलों के लिए), पीएसबी, एजोटोबैक्टर एजोस्पाइरिलम आदि खाद में मिश्रित करें। इससे खाद में लाभकारी जीवाणु की संख्या बढ़ती है और खाद की गुणवत्ता अधिक बढ़ जाती है। इसके एक माह बाद खाद का प्रयोग खेतों में करें। इसे खेतों में समान रूप से फैलाना चाहिए। कंपोस्टिंग या सड़न की आसान प्रक्रिया को जानकर किसान स्वयं अपने परंपरागत गड्ढे से कम समय में उत्तम गुणों वाली खाद बना सकता है, जिसमें जीवांश और पोषक तत्व भरपूर मात्रा में होते हैं। ■

कृषि वैज्ञानिकों को सोचना होगा

देवास में जन्मे-पले लेकिन इंदौर में बढ़े चित्रकार विष्णु चिंचालकर 'गुरुजी' (सन् 1917-2000) एम.एफ. हुसैन, बेन्द्रे के समकालीन तो रहे ही हैं, हुसैन, बेन्द्रे की टक्कर की उनकी प्रतिभा भी थी। बंबई, दिल्ली, कलकत्ता की चित्रकारी प्रतियोगिताओं में उन्होंने कई स्वर्ण पदक प्राप्त किए थे। 1956 में इंदौर में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के अधिवेशन में 'गुरुजी' की चित्रकला प्रदर्शनी का उद्‌घाटन विनोबाजी ने किया था। चित्रों को देखकर विनोबाजी प्रसन्न तो हुए ही, लेकिन उन्होंने गुरुजी से पूछा- 'रंग, कैनवास, ब्रश इन सबमें तेरा मौलिक क्या है?' बात गुरुजी के दिल और दिमाग में गहरी पैठ गई। शायद यही उनके नए कला विषय का टर्निंग पॉइंट था। गुरुजी ने चित्रकारी छोड़ी और फिर वे प्रकृति निर्मित वस्तुओं में रंग, रूप, आकार खोजने लगे। बाँस के टुकड़े, टहनियाँ, पत्ते, फूल, आम की गुठलियाँ, रस्सी, नारियल के टुकड़े, दाने निकले हुए भुट्टे; न जाने किन-किन चीजों से गुरुजी ने हिरण, बिल्ली, बंदर, मानव आकृतियाँ बनाकर प्रदर्शित की। बंबई की जहाँगीर आर्ट गैलरी में जहाँ ख्यात-प्रख्यात चित्रकारों की प्रदर्शनियाँ लगती हैं, वहाँ गुरुजी ने अपनी चित्र-विचित्र कला का जब प्रदर्शन किया तो लोग विस्मित हो गए। यह प्रदर्शन एक किंवदंती बन गया।

प्रकृति के इस अद्‌भुत कैनवास पर मात्र कला ही नहीं, हमारा अन्न, हमारी औषधियाँ, हमारे उद्योगों का कच्चा माल भी बिखरा पड़ा है। तभी हमारे ऋषि-मुनियों ने हर मौसम में पकने वाले गुणकारी खाद्यान्नों की वनस्पतियाँ खोज निकाली। चरक और सश्रुत ने औषधियाँ खोजी। इन्हीं तिनकों से जापान के फुकुओका ने बगैर जोत की प्राकृतिक खेती खोजी। कार्बर ने दूध, पनीर, बटर, रंग, मोटर के पार्ट्स जैसे 300 उद्योगों का कच्चा माल खोजा। अल्बर्ट हॉवर्ड ने पत्ते, डंठल, जड़ें, गोबर, गौमूत्र से खाद तैयार कर विश्व को जैविक खेती के लिए भारत आमंत्रित किया और हमारे श्रीपाद अच्युत दाभोलकर ने केवल सूर्य के प्रकाश को सही ढंग से पकड़कर महाराष्ट्र में अंगूर खेती में क्रांति पैदा की। अगर प्रकृति में इतना सब कुछ है तो हमारा कृषि विज्ञान प्राकृतिक विज्ञान को छोड़ प्रौद्योगिकी (रसायन, जीएम) की ओर क्यों लालायित है? इक्रीसेट (ECRISAT, सिकंदराबाद) के एक कृषि वैज्ञानिक ने 1976 में एक बार दुःखी होकर कहा था- उत्पादन बढ़ाने की ताकत तो यूरिया, फास्फेट और पोटाश के बैगों में है। हमारा क्या है?

विभिन्न जलवायु में विभिन्न आय वाले हमारे जनमानस के लिए एक जैसा अन्न पैदा करना क्या यही कृषि अनुसंधान का एकमात्र लक्ष्य है? उन्हें सस्ते से सस्ता कपड़ा कैसे मिले, आवास की क्या व्यवस्था हो, खाना पकाने के लिए सस्ती ऊर्जा का प्रबंध कहाँ से और कैसे करें? क्या हम यह सब प्रकृति माँ (मदर नेचर) से माँग सकते हैं? ■

7 वर्षों की वैज्ञानिक कसौटी पर खरी उतरी
तुअर (अरहर) की उन्नत किस्म
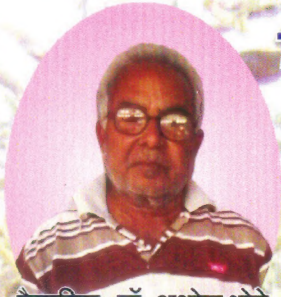
वैज्ञानिक-डॉ. अशोक धोटे
ग्राम ढाबा तेहसील भैंसदेही
जिला बैतूल

अशोक

पूरी तरह जैविक खेती से उगाई गई अशोक (तुअर-किस्म) किसानों के लिए वरदान साबित हुई है।

आर.ए.के. कृषि महाविद्यालय सीहोर से सन 1964 में प्रथम श्रेणी स्नातक पदवी प्राप्त अशोक धोटे ने रूस मे एम.एस. और डॉक्टरेट की। रूस के क्रॉसनाडार मे नजेशदा (आशा) और स्प्रिंगव्हीट (बसंती) नाम से दो गेहुं की उन्नत किस्में खोजी। आज अपने पैतृक ग्राम ढाबा (तेहसील भैंसदेही जिला बैतूल) के सीमांत कृषक अशोक धोटे द्वारा 2004 मे खोजी तुअर की यह किस्म उन्हीं को समर्पित है।

विशेषताएँ - सन 2009 मे पूरी तरह जैविक खेत मे बोई अशोक तुअर की विशेषताएं।

1. दो बार जैवनत्र और जैव स्फुर खेत मे गोबर खाद मे मिलाकर दी।
2. 10-15 मई को प्लास्टिक थैलियों मे बीज बोया।
3. जुलाई के प्रथम सप्ताह मे तैय्यार आधे एकड़ में 21845 वर्ग फुट मे रोपाई की।
4. पौधे की दूरी 1 फुट एवं कतारों मे 8 फुट का अंतर रखा।
5. अगस्त मे पौधो के सिरे काटे ताकि शाखाएं बढ़ें।
6. सितम्बर मे गुड़ का पानी फसल पर छिड़का ताकि परागीकण अच्छा हो।
7. अक्टूबर मे नीम जैव कीटनाशक+जैव फफूंद नाशक का छिड़काव किया।
8. जनवरी अंतिम से फरवरी 10 तक कटाई और गहाई की। आधे एकड़ में 5.51 क्वि. उपज मिली।
9. फसलों की औसत उंचाई 6.5 फुट। एक झाड़ का वजन 500 ग्राम। एक झाड़ मे 2095 फलियां लगीं। हर फली मे 3 दाने थे।

रंगवासा जैविक-ग्राम संस्थान (इन्दौर)
खेती पर्यावरण कुटीर उद्योग (बाबा डिके जनशिक्षा समिति द्वारा संचालित)

ग्राम-डेहरी, ग्राम पंचायत रंगवासा, पोस्ट-रंगवासा, आय.आय.एम के सामने, राऊ-पीथमपुर रोड़,
जिला-इन्दौर (म.प्र.) फोन : नं. : 7489172362 मो. : 94250-64315, 89820-28284
E-mail : arun_dike@yahoo.com, arundike@gmail.com

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक अरुण डिके द्वारा साधना प्रिंटिंग प्रेस, जी-3, चैतन्य कॉम्प्लेक्स, 8/1, काछी मोहल्ला, इंदौर से मुद्रित एवं
53-बी, प्रेम नगर, माणिक बाग रोड, इंदौर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक : अरुण डिके (फोन : 0731-2471588)